वर्ष : १०
अंक : ८१
९ सितम्बर १९९९
सम्पादक : क. रा. पटेल
प्रे. खो. मकवाणा
मूल्य : रू. ६-००

सदस्यता शुल्क

भारत में

(१) वार्षिक : रू. ५०/-
(२) पंचवार्षिक : रू. २००/-
(३) आजीवन : रू. ५००/-

नेपाल व भूटान में

(१) वार्षिक : रू. ७५/-
(२) पंचवार्षिक : रू. ३००/-
(३) आजीवन : रू. ७५०/-
(डाक खर्च में वृद्धि के कारण)

विदेशों में

(१) वार्षिक : US $ 30
(२) पंचवार्षिक : US $ 120
(३) आजीवन : US $ 300

कार्यालय
'ऋषि प्रसाद'
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अमदावाद-३८०००५.
फोन : (०७९) ७५०५०१०, ७५०५०११.

प्रकाशक और मुद्रक : क. रा. पटेल
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा, साबरमती, अमदावाद-३८०००५ ने पारिजात प्रिन्टरी, राणीप, अमदावाद एवं पूर्वी प्रिन्टर्स, राजकोट में छपाकर प्रकाशित किया।

Subject to Ahmedabad Jurisdiction

१. जीवन-पाथेय — २
★ उन्नति के चार सूत्र

२. भागवत-अमृत — ६
★ महर्षि कर्दम एवं देवहूति का दिव्य चरित्र

३. श्रीयोगवाशिष्ठ महारामायण — ८
★ शिला में सृष्टि
★ परमेश्वरीय पिटारी

४. गुरुवाणी — १०
★ श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद स्वामी श्री लीलाशाहजी महाराज की अमृतवाणी

५. पर्व-मांगल्य — ११
★ प्रेम के पुजारी : श्रीकृष्ण
★ श्रीकृष्ण की समता ★ ऋषि पंचमी

६. जीवन-सौरभ — १८
★ प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद स्वामी श्री लीलाशाहजी महाराज : एक दिव्य विभूति

७. सत्संग-मंजरी — २०
★ मानवता की महक

८. कथा-अमृत — २२
★ हक की रोटी ★ सूखा नारियल

९. जीवन-पथदर्शन — २४
★ एकादशी-माहात्म्य

१०. गुरुप्रसाद — २५
★ गुरु-महिमा

११. स्वास्थ्य-संजीवनी — २६
★ पुनर्नवा-साटी-श्वेता-विषखपरा
★ पुनर्नवा-साटी के औषधि-प्रयोग
★ कुछ उपयोगी बातें
★ सर्पदंश-उपचार

१२. योगयात्रा — ३०
★ गुरुप्रसादरूपी फल फला...

१३. संस्था-समाचार — ३१

पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग

SONY चैनल पर 'ऋषि प्रसाद' रोज सुबह ७.३० से ८

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्रव्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें।

उन्नति के चार सूत्र

✻ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✻

संसाररूपी युद्ध के मैदान में परमात्मा को किस तरह पाया जा सकता है ? यह ज्ञान यदि पाना हो तो इसके लिए 'श्रीमद्भगवद्गीता' है। मृत्यु को किस तरह सुधारा जा सकता है ? यह ज्ञान यदि पाना हो तो राजा परीक्षित का अनुकरण करो।

परीक्षित राजा जब विचरण करते थे तब यह चिंतन करते थे कि आखिर क्या ? संसार के सब काम पूरे हो गये तो क्या और अधूरे रह गये तो क्या ? ऋषि कुमार शमीक का शाप मिलने से उनके चित्त में वैराग्य तो था ही। जब शुकदेवजी जैसे महान् ब्रह्मवेत्ता का सत्संग मिल गया एवं आत्मचिंतन में तत्परता से लग गये तो मात्र सात दिनों में ही उन्होंने परम तत्त्व का साक्षात्कार कर लिया। परमात्म-शांति पाई और परमात्म-शांति का उद्गम-स्थान अपने '**सोऽहं**' स्वभाव को भी जान लिया।

यदि तुम भी अपना काम शीघ्र बनाना चाहते हो, भागवत के धर्म को पाना चाहते हो तो परीक्षित की तरह सजाग हो जाओ कि 'इतना खाया, इतना पिया, इतना घूमा, इतना छल-कपट किया लेकिन आखिर में इनमें से क्या काम आयेगा ?

साधक को अपनी दिनचर्या का विश्लेषण करना चाहिए। महीने भर अथवा साल भर की योजना न बनायें वरन् रोज सुबह योजना बनायें कि : 'आज चाहे कुछ भी हो जाये, बेहोशी में नहीं जीऊँगा, होश में ही जीऊँगा, सजाग रहूँगा। जो कुछ भी करूँगा, खाऊँगा, पियूँगा, लूँगा-दूँगा, उसका परिणाम क्या होगा ? इसका पहले विचार करूँगा। मेरी सारी क्रियाएँ, सारी चेष्टाएँ ईश्वर की ओर ले जानेवाली हैं या ईश्वर से विमुख करनेवाली हैं ? ऐसा पहले चिंतन करूँगा...' इस प्रकार विचार करके कर्म करते रहने से साधक को ईश्वराभिमुख होने में सहायता मिलती है।

यदि अपने चिंतन का, अपनी बुद्धि का सदुपयोग करने की कला आ जाये तो मनुष्य संसार में खूब आनंद से, खूब शांति से एवं खूब प्रेम से जी सकता है। स्वर्ग के सुख से वह कई गुना ज्यादा सुख पा सकता है। मृत्यु के पहले और बाद भी मुक्ति का अनुभव कर सकता है।

भगवद्गीता के सोलहवें अध्याय का उद्देश्य ही यह है कि मनुष्य अपने आत्मदेव के ज्ञान को पाकर मुक्त हो जाये। आसुरी वृत्तियों से किस प्रकार बचा जाये, सांसारिक बंधनों से किस प्रकार छूटा जाये और मुक्ति सरलता से मुट्ठी में कैसे आये ? इसके लिए गीता का सोलहवाँ अध्याय दैवी संपत्ति का अर्जन करने के लिए कहता है। दैवी संपत्ति में निर्भयता, मौन, तप, आहार-संयम आदि गुण हैं।

मनुष्य को जीवन में निर्भय होना चाहिए। 'शादी-विवाह में इतना खर्च नहीं करूँगा तो बेइज्जती होगी...

> *दुःख एवं मुसीबतें डरपोक मनुष्य का ही पीछा करती हैं, जबकि निर्भय व्यक्ति के सामने उनकी पूँछें दब जाती हैं। मुसीबतों को बुलाना हो तो भयभीत रहो और उनकी पूँछें दबानी हो तो निर्भय बनो।*

> *ब्रह्मज्ञानी महापुरुष की स्मित भरी नजर से लोगों का चित्त पवित्र होने लगता है।*

उधार लेकर भी फर्नीचर नहीं खरीदूँगा तो लोग क्या कहेंगे... इस प्रकार के कई भय मनुष्य को सताते रहते हैं। जिस काम से तुम्हारा चित्त भयभीत होता हो एवं दूसरों की खुशामद करने में लगता हो, उसे छोड़ दो। तुम तो केवल अपने अंतर्यामी परमात्मा को राजी करने का प्रयत्न करो। पफ-पावडर, लिपस्टिक-लाली आदि से शरीर को नहीं सजाएँगे तो लोग क्या कहेंगे ? इसकी परवाह न करो। 'बाहर के इन सौंदर्य-प्रसाधनों का उपयोग करके हमें लोगों का भोग्य नहीं बनना है वरन् हमें तो लोकेश्वर को पानेवाला साधक बनना है।' ऐसा निश्चय करके अपना जीवन संयमी, सादा एवं पवित्र बनाना चाहिए।

हमें पता ही नहीं है कि हमारे भीतर कितना खजाना भरा पड़ा है और हम कितना, किस प्रकार उसे खर्च कर रहे हैं।

जीवन में निर्भयता लाओ। शराबी कहता है कि : 'चलो मित्र ! शराब पियें।' अब यदि तुम शराब नहीं पीते हो तो मित्र नाराज हो जाते हैं और यदि पीते हो तो तुम्हारी बरबादी होती है। फिर क्या करें ? अरे, मित्र नाराज होते हैं तो होने दो परन्तु शराब नहीं पीना है- यह निश्चय दृढ़ रखो। जो लोग तुम्हें खराब काम, हल्की संगति और हल्की प्रवृत्तियों की तरफ घसीटते हैं उनसे निर्भय हो जाओ लेकिन माता-पिता, गुरु, शास्त्र एवं भगवान क्या कहेंगे ? इस बात का डर रखो। ऐसा डर रखने से चित्त पवित्र होने लगता है क्योंकि ऐसा डर हल्के कामों, हल्की प्रवृत्तियों एवं हल्की संगति से बचानेवाला होता है।

मौन से अंदर का आनंद प्रगट होने लगेगा। विचारशक्ति, अनुमानशक्ति के अलावा धैर्य, क्षमा, शांति आदि सद्गुण भी आने लगेंगे।

हरि डर गुरु डर जगत डर, डर करनी में सार।
रज्जब डरिया सो उबरिया, गाफिल खायी मार ॥

जीवन में निर्भयता आनी ही चाहिए। झूठे आडंबरों से बचने के लिए भी निर्भय बनो। आप मेहमानों को भिन्न-भिन्न प्रकार के अच्छे-अच्छे एवं तले हुए व्यंजन न खिला सको तो कोई बात नहीं, चिंता मत करो। परंतु यदि तुम सच्चे दिल से, एक प्रेमभरी नजर से पानी के एक प्याले से भी मेहमान का आदर-सत्कार कर सको तो वह मेहमान तुम्हारे यहाँ से उन्नत होकर जायेगा।

तुम लोगों की परवाह मत करो कि 'ऐसा नहीं करेंगे तो लोग क्या कहेंगे ?' अरे ! तुम अपनी नाक से श्वास लेते हो कि लोगों की नाक से ? अपने जीवन का आयुष्य खर्चते हो कि लोगों के जीवन का ? हम एक-दूसरे से ऐसे बँध गये हैं, ऐसे बँध गये हैं कि शराब-कबाब आदि की पार्टियों से भले अपना व दूसरों का सत्यानाश होता हो फिर भी 'लोग क्या कहेंगे ?' के भूत से ग्रस्त हो जाते हैं एवं अपनी हानि करते रहते हैं। इसीलिए गीता में कहा है : **अभयं सत्त्वसंशुद्धिः ।** निर्भय एवं सत्त्वगुणी बनो। कायर, डरपोक एवं रजो-तमोगुणी मत बनो।

मैं कभी-कभी शाम को खेतों में घूमने जाता हूँ। खेतों के आस-पास कुछ घर भी होते हैं। वहाँ के कुत्ते मुझे देखकर भौंकने लगते हैं। मेरा तो विनोदी स्वभाव है। कुत्ते भौंकते हैं तब यदि मैं खड़ा रह जाता हूँ तो उनकी पूँछ भी दबी हुई पाता हूँ लेकिन जान-बूझकर विनोद में दौड़ने लगता हूँ तो कुत्ते तो मेरा पीछा करते ही हैं, साथ में उनके छोटे-छोटे पिल्ले भी मेरा पीछा करने लग जाते हैं।

दुःख एवं मुसीबतें डरपोक मनुष्य का ही पीछा करती हैं, जबकि निर्भय व्यक्ति के सामने उनकी पूँछें दब जाती हैं। अतः दुःख एवं मुसीबतों को बुलाना हो तो भयभीत रहो और उनकी पूँछें दबानी हो तो निर्भय बनो।

भगवान से, गुरु से, माता-पिता से, शास्त्र से भले अनुशासित रहो परंतु जो हल्का संग करके पतन करा दें, उनसे निर्भय रहना चाहिए। उनसे किनारा करके निर्भयतापूर्वक अपने जीवन में अच्छे संस्कारों को पकड़े रहना चाहिए।

पहली बात है कि निर्भय रहो। दूसरी बात है कि हृदय शुद्ध रहे ऐसा आहार-विहार और चिंतन करो। कहा भी गया है कि : **जैसा खाओ अन्न वैसा बनता मन।** साधक को अपने आहार पर खूब ध्यान देना चाहिए। 'आहार' शब्द केवल भोजन के लिए ही नहीं है वरन् आँखों से, कानों से, नाक से, त्वचा से जो ग्रहण किया जाता है, वह भी आहार के ही अंतर्गत आता है। अतः उसमें सात्विकता का ध्यान रखना चाहिए।

जो लोग खराब काम, हल्की संगति, हल्की प्रवृत्तियों की तरफ घसीटते हैं उनसे निर्भय हो जाओ लेकिन माता-पिता, गुरु, शास्त्र एवं भगवान क्या कहेंगे ? इस बात का डर रखो। ऐसा डर हल्की प्रवृत्तियों से बचानेवाला होता है।

तीसरी बात है तप। हमारे जीवन में तपस्या भी होनी चाहिए। सुबह भले ठंड लगे फिर भी सूर्योदय से पूर्व उठकर स्नान कर लो। देखो, इससे हृदय में कितनी प्रसन्नता और सत्त्वगुण बढ़ता है ! फिर थोड़ा ध्यान करो। यह तप हो जाता है। सत्संग अथवा सत्कर्म के समय थोड़ा तन-मन-धन तो अवश्य खर्च होता है किन्तु वह तुम्हारी तपस्या बन जाता है।

यदि अपने चिंतन एवं बुद्धि का सदुपयोग करने की कला आ जाये तो मनुष्य संसार में खूब आनंद, शांति एवं प्रेम से जी सकता है। स्वर्ग के सुख से वह कई गुना ज्यादा सुख पा सकता है।

चौथी बात है मौन। प्रतिदिन एक-दो घंटे का मौन रखो। इससे तुम्हारी आंतरिक शक्ति बढ़ेगी, तुम्हारी वाणी में आकर्षण आयेगा। जो पतंगे की तरह इधर-उधर भटकते रहते हैं एवं व्यर्थ की बक-बक करते रहते हैं उनके चित्त में न शांति होती है न क्षमा, न विचारशक्ति होती है और न ही अनुमानशक्ति। वे बिखर जाते हैं। स्त्रियों को तो मानों ज्यादा बोलने का ठेका ही मिला हुआ है। सास-बहू में, अड़ोस-पड़ोस में व्यर्थ की गप्पें मारकर वे स्वयं ही झगड़े पैदा कर लेती हैं। यदि झगड़े न भी होते हों तो फालतू बातें तो होती ही हैं। उन बेचारियों को पता ही नहीं होता कि व्यर्थ की बातें करने से प्राणशक्ति एवं वाक्शक्ति का ह्रास होता है।

अतः साधक को चाहिए कि वह मौन रखे। मौन से बहुत लाभ होता है। यदि एक बार भी तुम लंबे समय तक मौन रखो तो अंदर का आनंद प्रगट होने लगेगा। विचारशक्ति, अनुमानशक्ति के अलावा धैर्य, क्षमा, शांति आदि सद्गुण भी आने लगेंगे।

गुजराती में कहावत है : **न बोल्यामां नव गुण।** अर्थात् न बोलने में नौ गुण हैं। जो ज्यादा बोलते हैं वे झूठ बोलते हैं, झगड़े उत्पन्न करते हैं और अपनी आयु क्षीण करते हैं। किसीके साथ बात करो तो कम-से-कम, स्नेहयुक्त एवं सारगर्भित बात करो। इससे तुम्हारी वाणी का एवं तुम्हारा प्रभाव पड़ेगा।

ब्रह्मज्ञानी महापुरुष एक स्मितभरी नजर डालते हैं और पूरा जनसमुदाय तन्मय हो जाता है। अरे ! मनुष्यों की तो क्या बात, ब्रह्मलोक तक के देवी-देवता भी उनके अनुकूल हो जाते हैं। हम उनका माहात्म्य नहीं जानते, इसीलिए 'हा-हा... ही-ही...' में अपना जीवन गँवा डालते हैं। हमें पता ही नहीं है कि हमारे भीतर कितना खजाना भरा पड़ा है और हम कितना, किस प्रकार उसे खर्च कर रहे हैं।

ज्ञानवानों का स्मित ऐसा अनोखा होता है, जिससे कोई भी सहज में ही उनके प्रति अहोभाव से भर जाता है। श्रीकृष्ण अपनी स्मितभरी नज़र डालकर बंसी बजाते थे तो सब ग्वाल-गोपियों के चित्त सहज में ही पवित्र हो जाते थे। उसी प्रकार ब्रह्मज्ञानी महापुरुष की स्मित भरी नजर से लोगों का चित्त पवित्र होने लगता है। सिंधी भाषा में कहा है :

नूरानी नज़रुनसां दिलबर दरवेशन,
मुंखे निहाल करे छड्यो।

अर्थात् अपनी नूरानी नजरों से उन दिलबर संत ने मुझे निहाल कर दिया।

निगाहों से वे निहाल हो जाते हैं,
जो संतों की निगाहों में
आ जाते हैं।

तुम भी अपनी दृष्टि ऐसी ही बनाओ। ऐसा नहीं कि व्यर्थ का इधर-उधर भटकते रहो, व्यर्थ बोलते रहो एवं अपने ज्ञानतंतुओं, अपनी रक्तवाहिनियों, अपने शरीर एवं मन को सताते रहो।

रोज सुबह योजना बनायें कि : 'आज चाहे कुछ भी हो जाये, बेहोशी में नहीं जीऊँगा, होश में ही जीऊँगा, सजाग रहूँगा। जो कुछ भी करूँगा उसका परिणाम क्या होगा ? इसका पहले विचार करूँगा।

जीवन में निर्भयता, आहारशुद्धि, तप एवं मौन- ये गुण आ जायें तो जीवन काफी उन्नत हो जाये और ये काम तुम कर सकते हो। युद्ध के मैदान में अगर अर्जुन यह काम कर सकता है तो तुम क्यों नहीं कर सकते ? अर्जुन तो कितनी विपत्तियों के बीच था ! फिर भी श्रीकृष्ण ने उसको गीता का उपदेश दिया था। तुम्हारे आगे इतनी झंझटें नहीं हैं, भाई ! यदि अर्जुन युद्ध के मैदान में गीता का अधिकारी है तो तुम भी सत्संग के मैदान में गीता के अधिकारी जरूर हो। बस, कमर कस लो इन दैवी गुणों को अपनाने के लिए... निर्भयता, आहार-संयम, तप एवं मौन को आत्मसात् करने के लिए।

'हम क्या करें ? हम तो गृहस्थी हैं... हम तो संसारी हैं... हम तो नौकरीवाले हैं...' अरे ! तुम्हारे साथ संसार की जितनी झंझटें हैं, उससे ज्यादा झंझटें पहले के समय में थीं। फिर भी हिम्मतवान्, बुद्धिमान पुरुषों ने समय बचाकर विकारों एवं बेवकूफियों पर विजय पा ली एवं अपने आत्मा-परमात्मा को, अपने रब को पहचान लिया।

वर्धमान के जीवन में कितने विघ्न आये ! फिर भी वे अडिग रहे एवं साधना में लगे रहे तो भगवान महावीर के रूप में उभरे। प्रह्लाद के जीवन में कितने विघ्न आये ! मीराबाई के जीवन में कितनी मुसीबतें आयीं ! फिर भी वे अडिग रहीं, निर्भय रहीं, हताश-निराश न हुईं तो कितनी उन्नत हो गईं !

तुम भी उन्नत हो सकते हो, अपने-आपको जान सकते हो। शर्त इतनी ही है कि दैवी गुणों को बढ़ाओ, पुरुषार्थ करो एवं सत्संग अवश्य करो। सत्संग से ही तुम्हें अपने दैवी गुणों को विकसित करने की प्रेरणा मिलेगी, प्रोत्साहन मिलेगा, मार्गदर्शन मिलेगा, उत्साह उभरेगा। निर्भयता, आहारशुद्धि, वाणी का संयम एवं तप- इन दैवी गुणों का विकास तुम्हारे लिए उन्नति का द्वार सहजता से ही खोल देगा। अतः आज से, अभी से दृढ़ता से लगो। लगोगे न ?

*

'ऋषि प्रसाद' स्वर्णपदक योजना

इस गुरुपूर्णिमा से आगामी गुरुपूर्णिमा तक एक वर्ष के दौरान 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका के ज्यादा से ज्यादा सदस्य बनानेवाले पाँच सेवाधारी साधकों को आम सत्संग-सभा में पूज्यश्री के पावन करकमलों द्वारा स्वर्णपदक दिये जायेंगे।

सेवाधारी कृपया ध्यान दें

१. प्रतियोगिता में अंक क्रमांक ८० (अगस्त) से बनाये गये सदस्यों की ही गिनती होगी।

२. प्रतियोगिता में व्यक्तिगत स्तर पर बनाये गये सदस्यों की ही गिनती होगी, किसी समिति के या सामूहिक स्तर पर नहीं।

३. प्रतियोगिता में भाग ले रहे नये साधकों को अमदावाद 'ऋषि प्रसाद' मुख्यालय से सेवाधारी क्रमांक लेना अनिवार्य है।

४. अधिक जानकारी के लिए 'ऋषि प्रसाद' मुख्यालय, अमदावाद से सम्पर्क करें।

महर्षि कर्दम एवं देवहूति का दिव्य चरित्र

✻ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✻

(गतांक का शेष)

मैंने सुना है कि परदेश में किसी जगह से एक संत गुजर रहे थे। रास्ते में उन्होंने देखा कि एक अंग्रेज महिला कब्र पर पंखा झल रही है। उन संत ने गाड़ी रुकवायी। गये उस महिला के पास और बोले :

''तू किसको पंखा झल रही है ?''

उस महिला ने कहा : ''ये मेरे पति थे।''

संत : ''धन्य हो देवी ! धन्य हो ! हमने तो सुना था कि भारत में ही ऐसी देवियाँ हैं जो पति को शांति मिले इसलिए पंखा झलती हैं, सेवा करती हैं लेकिन तुम तो पति की कब्र पर भी पंखा झल रही हो ?''

तब उस महिला ने कहा : ''आप ऐसा क्यों बोल रहे हैं यह मेरी समझ में नहीं आया।''

संत : ''तू अपने पति की कब्र पर इसीलिए पंखा झल रही है न, कि पति को शांति मिले ?''

महिला : ''नहीं नहीं, इसलिए नहीं। वह जब बीमार पड़ा तब मुझसे बोला था कि 'तू दूसरा पति मत करना।' मैंने उससे कहा कि 'मैं तो करूँगी।' तब वह बोला कि 'अच्छा... तो फिर जल्दी मत करना।' मैंने कहा कि 'तुम मुरे नहीं कि मैंने किया नहीं।' आखिर उसने गिड़गिड़ाते हुए मुझसे वचन लिया कि 'जब तक मेरी कब्र गीली हो तब तक तू मेरी बने रहना, दूसरा मत करना।' इसलिए मैं पंखा झल रही हूँ ताकि यह कब्र जल्दी सूखे तो दूसरा करूँ।''

हद हो गयी !

इसका नाम है भोगप्रधान संस्कृति। पश्चिम की संस्कृति है भोगप्रधान संस्कृति जबकि भारतीय संस्कृति है योगप्रधान संस्कृति।

अपनी पत्नी देवहूति की इच्छा को पूर्ण करने के लिए महर्षि कर्दम ने अपने योगबल से एक ऐसा विमान रचा, जो इच्छानुसार सर्वत्र जा सकता था। यह विमान सब प्रकार के इच्छित भोग-सुख प्रदान करनेवाला, अत्यन्त सुन्दर, सब प्रकार के रत्नों से युक्त, सब संपत्तियों की उत्तरोत्तर वृद्धि से संपन्न, मणिमय खंभों से सुशोभित, सभी ऋतुओं में सुखदायक था। विमान में रहने के लिए शयनखंड अलग, साधन-भजन का खंड अलग, जलाशय, क्रीड़ास्थली, आँगन, बैठकगृह आदि सब सुविधानुसार अलग-अलग बने हुए थे। योगबल से ऐसे सुन्दर पक्षी बनाये कि ब्रह्माजी की सृष्टि से पक्षी उनके पास किल्लोल करने आ जाते थे। वह विमान जल में भी चल सकता था, थल में भी चल सकता था, आकाश में भी उड़ सकता था और गुरुत्वाकर्षण के नियमों से पार लोक-लोकान्तर की भी सैर करा सकता था। वह विमान संकल्प से चल

> *दुनिया के सारे वैज्ञानिक मिलकर अपने आविष्कृत साधनों से एक आदमी को उतना सुखी नहीं कर सकते जितना शुद्ध सात्त्विक सुख किसी महापुरुष की एक निगाह मात्र से हजारों आदमियों को मिल सकता है।*

सकता था। उसमें किसी चालक की जरूरत न थी। ऐसा वह दिव्य और भव्य विमान था। आज के वैज्ञानिक ऐसे दिव्य विमान की तो कल्पना तक नहीं कर सकते हैं।

दुनिया के सारे वैज्ञानिक मिलकर अपने आविष्कृत साधनों से एक आदमी को उतना सुखी नहीं कर सकते जितना शुद्ध सात्त्विक सुख किसी महापुरुष की एक निगाह मात्र से हजारों आदमियों को मिल सकता है। वैज्ञानिक आविष्कारों से सुविधा मिल सकती है, सुखाभास मिल सकता है लेकिन सच्चा आत्मसुख नहीं। सुख तो तुम्हारी आत्मा का है। 'यह मिला, वह मिला तो मैं सुखी हो गया...' यह तुम्हारा माना हुआ सुख है। वास्तविक सुख तो आत्मा-परमात्मा के प्रसाद से मिलता है तब पता चलता है कि वास्तविक सुख क्या है ?

जो सुख नित्य प्रकाश विभु, नामरूप जंजाल।
मति न लखे जो मति लखे, सो मैं शुद्ध अपार॥

जो नित्य सुख है वह आत्मा का है। नाम और रूप तो माया का जंजाल है। जिसको मति नहीं देखती लेकिन जो मति को देखता है उस चैतन्य के सुख में कर्दम ऋषि टिक गये और उस सुखस्वरूप चैतन्य में टिककर योग-सामर्थ्य का उपयोग करके उन्होंने दिव्य विमान बनाया जो किसी यंत्र से नहीं अपितु मन की इच्छा से चलता था।

दुनिया में उस समय किसीके पास ऐसा विमान नहीं था जो कर्दम ऋषि के विमान की बराबरी कर सके। कर्दमजी का वैभव शंका या आश्चर्य का विषय नहीं है। जिन लोगों ने भगवान के चरणों का आश्रय ले लिया है, उनके लिए संसार का कोई भी पदार्थ दुर्लभ नहीं है।

फिर कर्दम ऋषि ने देखा कि पृथ्वी के साम्राज्य के एकछत्र सम्राट की सुकन्या यह देवहूति अपने फटे-चिथड़े एवं मैले-कुचैले वल्कल को देखकर सिकुड़ रही है तो वे बोले :

''देवी ! संकोच न करो। जाओ, सरोवर में स्नान करो। वस्त्र-अलंकार तुम्हें अपने-आप प्राप्त हो जायेंगे।''

देवहूति सरोवर में स्नान करने गयी और ज्यों-ही बाहर निकली, त्यों-ही उसने देखा कि उसका कृशकाय शरीर हृष्ट-पुष्ट हो चुका है एवं वह वस्त्र-अलंकारों से सुसज्ज हो गयी है तथा हजारों दासियाँ उसकी सेवा में खड़ी हैं। कर्दम ऋषि भी स्नान आदि से निवृत्त होकर वस्त्र-अलंकारों से सुशोभित हो रहे थे। उस विमान में उन्होंने वर्षों तक सांसारिक जीवन व्यतीत किया और नौ कन्याओं को जन्म दिया।

एक दिन कर्दम ऋषि ने देवहूति से कहा :

''देवी ! अब समय हो गया है। सुबह-दोपहर-शाम-रात करते-करते कालचक्र हमारी आयु क्षीण कर रहा है। अतः अब मुझे इस गृहस्थी के जंजाल से निवृत्त होकर अपने परब्रह्म परमात्मा में स्थिति करने के लिए एकान्त में जाना है। अब मैं गृहस्थाश्रम का त्याग करके संन्यास लूँगा।''

देवहूति : ''मुझे आप जैसे योगी को प्राप्त करने का सौभाग्य मिला फिर भी मैंने आपसे संसार के इन तुच्छ विषयों की माँग की ! मुझसे गलती तो हुई है किन्तु आप मेरी एक प्रार्थना स्वीकार करें : इन कन्याओं का विवाह हो जाने दें एवं भगवान ने आपको जो वरदान दिया है कि 'मैं आपके घर अवतरित होऊँगा' उसे फल जाने दें। तब तक आप रुकने की कृपा करें ऐसी मेरी नम्र प्रार्थना है।''

कर्दमजी बोले : ''हे सत्य धर्म का पालन करनेवाली सती ! तुम अपने विषय में इस प्रकार खेद न करो। तुम्हारी गोद में अविनाशी भगवान विष्णु शीघ्र ही पधारेंगे जो तुम्हें ब्रह्मज्ञान का उपदेश करके तुम्हारे हृदय की अहंकारमयी ग्रंथि का छेदन करेंगे।''

(क्रमशः)
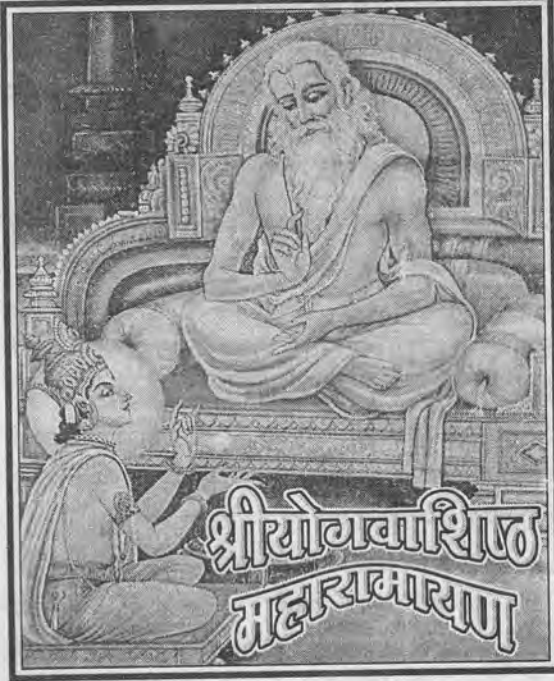
शिला में सृष्टि

[संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से]

[गतांक का शेष]

मुझे ऐसा कहकर वह विद्याधरी उन ब्रह्माजी को जगाने के लिए बोली : ''नाथ ! ये मुनीश्वर वशिष्ठजी आज इस घर में पधारे हैं । ये मुनि दूसरे ब्रह्माण्डरूपी घर में रहनेवाले ब्रह्माजी के मानस पुत्र हैं । महापुरुषों का स्वागत करना सत्पुरुषों का स्वभाव है । अर्घ्यपाद्य से इनका पूजन कीजिए ।''

उस विद्याधरी के ऐसा कहने पर वे परम बुद्धिमान ब्रह्माजी समाधि से जाग उठे एवं बोले :

''मुने ! आपने इस असार संसार के सारतत्त्व को हाथ पर रखे हुए आँवले के समान जान लिया है । आप ज्ञानरूपी अमृत की वर्षा करनेवाले महा मेघ हैं । आपका स्वागत है । महर्षे ! इस समय आप इस अत्यंत दूरवर्ती मार्ग पर आ पहुँचे हैं । बहुत दूर का रास्ता तय करने के कारण आप बहुत थक गये होंगे । यह आसन है, इस पर बैठिए ।''

उनके ऐसा कहने पर वशिष्ठजी उनको प्रणाम करके उनके द्वारा निर्दिष्ट आसन पर बैठ गये । दो घड़ी तक देवता, ऋषि, गन्धर्व, मुनि एवं विद्याधरों द्वारा वशिष्ठजी की स्तुति आदि हुई । तदनंतर वशिष्ठजी ने कहा :

''भूत, वर्त्तमान और भविष्य के स्वामी ब्रह्मदेव ! यह क्या बात है कि यह नारी मेरे पास आई और कहने लगी कि 'आप अपने ज्ञानोपदेश से प्रयत्नपूर्वक हमें बोध की प्राप्ति कराइये ?' देव ! आप तो संपूर्ण भूतों के स्वामी तथा समस्त प्रकार के ज्ञानों में पारंगत हैं । जगत्पते ! बताइए, आपने इसे अपनी पत्नी बनाने के लिए ही उत्पन्न किया था, तो फिर इसे उस पद पर क्यों नहीं प्रतिष्ठित किया ? इसको वैराग्य की ओर क्यों ले गये ?''

उस शिलास्थित ब्रह्माण्ड के रचयिता ब्रह्माजी ने कहा : ''हे मुने ! यह सृष्टि मैंने अपनी इच्छाशक्ति से बनायी थी । पत्नी की इच्छा हुई तो संकल्प से पत्नी भी बना ली । फिर देखा कि जिस परमात्मा की सत्ता से संकल्प द्वारा इतनी घटना घट सकती है उस परमात्मा में ही क्यों न ठहर जायें ? अतः मैं अपनी चित्तवृत्ति को समेटकर, परमानंद में मग्न होकर आत्मशांति में ले आया । अब कोई भोग भोगने की मेरी इच्छा नहीं है और न ही इस सृष्टि को चलाने की मेरी इच्छा है । मेरी

मानव चाहे तो दूसरी सृष्टि भी बना सकता है किन्तु भोग-वासना एवं विकारों के दलदल में गिरकर वह अपनी शक्ति खो देता है । छिपी हुई शक्ति को सद्गुरुकृपा से जाग्रत कर दे तो फिर उसके लिए असंभव कुछ नहीं ।

सेवा करते-करते इस स्त्री में भी धारणाशक्ति सिद्ध हो गयी है। इच्छाशक्ति के अनुसार घटनाएँ घटने लग जाती हैं लेकिन इसकी बुद्धि में से मोह अभी गया नहीं है। इसको भोग भोगने की इच्छा है। भोग हमेशा अपना नाश करने में संलग्न होता है। आप इसको आशीर्वाद दें कि इसकी भोग भोगने की इच्छा निवृत्त हो जाये और परमात्मा में चित्तवृत्ति लग जाये।

...अब मैं इस सृष्टि को धारण करने का संकल्प समेट रहा हूँ। आप जल्दी-से-जल्दी इस सृष्टि से बाहर पधारें। मेरे संकल्प में यह सृष्टि ठहरी है। संकल्प समेटते ही इसका प्रलय हो जायेगा।''

वशिष्ठजी कहते हैं : ''मैं उस सृष्टि से रवाना हुआ और मेरे देखते-देखते उस ब्रह्माजी ने संकल्प समेटा तो सृष्टि का प्रलय होने लगा। सूर्य तपने लगा। प्रलयकाल की वायु चलने लगी। पर्वत खंडित होने लगे। लोग मरने लगे और वृक्ष सूखने लगे।''

मानव की आत्मा में कितना सामर्थ्य है ! वह चाहे तो दूसरी सृष्टि भी बना सकता है किन्तु भोग-वासना एवं विकारों के दलदल में गिरकर वह अपनी शक्ति खो देता है। यदि मनुष्य अपनी छिपी हुई शक्ति को पहचानकर सद्गुरुकृपा से उसे जाग्रत कर दे तो फिर उसके लिए असंभव कुछ नहीं।

*

परमेश्वरीय पिटारी

वशिष्ठजी महाराज कहते हैं : ''हे रामजी ! इस संसार का सार शरीर है। शरीर का सार इन्द्रियाँ हैं। इन्द्रियों का सार मन है। मन का सार बुद्धि है। बुद्धि का सार जीव है। जीव का सार चिदावली या प्रकृति है। चिदावली का सार परमात्मा है। उसी परमात्मा से सत्ता ले-लेकर सब एक-दूसरे को सत्ता देते हैं।''

वह परमात्मा जो सबके हृदय में आत्मा बनकर बैठा है और जिसे मेरे गुरुदेव ने आत्मसात् किया था, उसीकी उपासना और उसीकी ओर यात्रा करने की कोशिश का नाम है साधना।

वह परमात्मा जो सबके हृदय में आत्मा बनकर बैठा है और जिसे मेरे गुरुदेव ने आत्मसात् किया था, उसीकी उपासना और उसीकी ओर यात्रा करने की कोशिश का नाम है साधना।

सारी शक्तियों का दाता वही परमात्मा है। सारा ज्ञान, सारे सुख, सारा सामर्थ्य उसीसे आता है। इन्द्र का इन्द्रपद भी उसीकी देन है। गुरु का पद भी उसीकी देन है एवं शिष्य में गुरुभाव प्रकटाने की देन भी उसी परमात्मा की है। जो तुम्हारा दाता है, उस दाता को भी देनेवाला दाता वह परमेश्वर ही है। दुनिया के सारे धनवान्, सारे बलवान्, सारे सत्तावान् भी उस परमेश्वर-द्वार के भिखारी ही हैं। समस्त जीवों को प्राणकला का जीवनदान देनेवाला जीवनदाता वह परमात्मा ही है। यदि वह परमात्मा दो मिनट के लिए भी हमारे श्वास का संचालन करने का कार्य नहीं करे तो सारे नेताओं के पद छू हो जाएँ... सारे धनवानों का धन यहीं पड़ा रह जाए। ऐसी वह परमेश्वरीय पिटारी बड़ी निराली है, जो सबको दान करते हुए भी कभी खाली ही नहीं होती।

जापान का मनुष्य अपना 'रोबोट' दिखाता है। बोलता है : ''देखो, हम यहाँ ऑफिस में बैठकर 'स्विच' चालू करते हैं, तो 'रोबोट' हमारे गोदाम में सामान रखने लगता है... सीमेन्ट बनाता है...'' आदि-आदि।

उस 'रोबोट' को बनाया किसने ? एक पानी की बूँद से मनुष्य बना। फिर वही मनुष्य डॉक्टर

बना, सेठ बना, नेता बना, वैज्ञानिक बना और उस मानव ने ही तो 'रोबोट' बनाया।

आखिर में वही पानी की बूँद मनुष्य बनकर, जीव बनकर राख की ढेरी बन जाती है फिर भी उस परमेश्वरीय पिटारी में कभी घाटा नहीं पड़ता, उसका भण्डार कभी खत्म नहीं होता। लाखों मच्छर मरे जा रहे हैं फिर भी नये-नये उत्पन्न होते जा रहे हैं। लाखों मनुष्य मरे जा रहे हैं फिर भी नये-नये पैदा हुए जा रहे हैं। महायुद्ध हुए, प्रलय हुए फिर भी नये जीव पैदा हुए जा रहे हैं। कैसी अद्‌भुत पिटारी है!

उस पिटारी को अगर एक बार भी जान लिया तो पुनः गर्भवास का दुःख नहीं सहना पड़ता है। बुद्धिमानों की बुद्धि जिससे खिलती है, तपस्वियों की तपस्या, जोगियों का जोग, भक्तों की भक्ति जिससे फलती है, उस परमेश्वर को हमारा प्रणाम है!

अतः उसीमें प्रीति करो। उसीमें शांत हो। उसी लीलाधर की लीला में लीन होते जाओ। जो उसमें लीन होंगे वे शांति पाएँगे।

शांति दोषों की निवर्तक और प्रसाद की जननी है। वह परमात्म-शांति ही सार है। परमात्म-शांति जहाँ से प्रगट होती है उस परमात्म-स्वभाव में जाग जाना परम सार है।

*

सेवाधारियों एवं सदस्यों के लिए विशेष सूचना

(१) कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नगद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अतः अपनी राशि मनीआर्डर या ड्राफ्ट द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

(२) 'ऋषि प्रसाद' के नये सदस्यों को सूचित किया जाता है कि आपकी सदस्यता की शुरूआत पत्रिका की उपलब्धता के अनुसार कार्यालय द्वारा निर्धारित की जाएगी।

श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद स्वामी श्री लीलाशाहजी महाराज की अमृतवाणी

जिन्हें परब्रह्म का पूर्ण बोध हो जाता है, ऐसे ज्ञानी महापुरुष का जीवन आश्चर्यजनक हो जाता है। ऐसे महापुरुष संसार में कमल के फूल की तरह निर्लेप रहते हैं। जैसे खरबूजा बाहर से कटा-फटा-सा दिखता है किन्तु भीतर से मिला होता है, उसी प्रकार ज्ञानी के भिन्न-भिन्न व्यवहार दिखते हुए भी वे भीतर से एकरस होते हैं। वे संसार में रहते हुए भी संसार के पार पहुँचे हुए होते हैं। साधारण आदमी उन्हें पहचान नहीं सकता।

दुःख-सुख दोनों सम कर जानो,
मान और अपमाना।
हर्ष-शोक ते रहे अतीता,
तिन न जगत पहचाना ॥

जिस प्रकार एक विद्यार्थी सपने में देखता है कि अध्यापक मुझे पढ़ा रहे हैं और मेरे साथ अन्य कई विद्यार्थी भी बैठे हुए हैं किन्तु जब वह जागता है तब कुछ भी नहीं रहता, वह आप ही अकेला होता है। ठीक उसी प्रकार ज्ञानी भी अपने-आपमें स्थित होते हैं। उन्हें अपने अतिरिक्त संसार में दूसरी कोई वस्तु नहीं दिखाई देती अर्थात् वे सबमें अपना ही रूप देखते हैं।

जैसे स्वप्न की सृष्टि काल्पनिक होते हुए भी स्वप्न के समय सत्य भासती है परंतु जब जागते

हैं तो उसके असत् होने का पता चलता है, उसी प्रकार जाग्रत में यह जो जगत सत्य दिखता है यह भी असम्यक् दृष्टि से उपजी हुई कल्पना ही है। जब सत्य का अपरोक्ष ज्ञान होता है तब इस सृष्टि के भी असत् होने का पता चल जाता है।

अब प्रश्न उठता है कि क्या ज्ञानियों को सचमुच में यह सृष्टि नहीं भासती ? इसका उत्तर यह है कि ज्ञानी को यह सृष्टि उस प्रकार भासती है जैसे वैज्ञानिकों को सिनेमा के दृश्य भासते हैं। जैसे वैज्ञानिक जानते हैं कि पर्दे पर दिखनेवाले दृश्य प्रकाश के अतिरिक्त और कुछ नहीं हैं, उसी प्रकार ज्ञानी भी जानता है कि यह सृष्टि बाजीगर की बाजीगरी के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है।

संसार के सुख और रस अविचार के कारण ही सत्य भासते हैं। जब विचार करने से उनका सत्य भासना समाप्त हो जाता है तब स्वतः ही वैराग्य उत्पन्न होने लगता है तथा संसार की आसक्ति मिटने लगती है।

पूर्ण ज्ञानी सागर के समान होते हैं। जैसे सागर वर्षा तथा नदी-नालों के सारे पानी को अपने में समा लेता है फिर भी उसमें कोई वृद्धि नहीं होती तथा बादलों के रूप में अमाप जलराशि आकाश में उड़ जाने पर भी उसमें कोई कमी नहीं होती। इसी प्रकार संसार के बनने अथवा बिगड़ने से, कोई वस्तु मिल जाने से अथवा छूट जाने से ज्ञानी के हृदय में क्षोभ नहीं होता, उनके सुख में कमी अथवा वृद्धि नहीं होती। वे सदैव एक समान और एक रस रहते हैं।

कहने का तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार ज्ञानी जगत को असत् जानते हैं, उसी प्रकार साधक को भी संसार के विषयों में असत्बुद्धि करनी चाहिए। संसार की विषय-वासनाओं से बचने का यह बड़ा सरल उपाय है। इस प्रकार की भावना करके वासनाओं को उखाड़ना चाहिए। वासनाओं का अन्त होने पर ही सच्चे सुख की प्राप्ति होगी।

प्रेम के पुजारी : श्रीकृष्ण

[जन्माष्टमी दिनांक : ३ सितम्बर '९९]

* संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से *

प्रेम में ऐसा जादू होता है कि रूखे-सूखे भोजन को भी व्यंजनों से ज्यादा स्वादिष्ट बना देता है।

श्रीकृष्ण के आगमन पर दुर्योधन ने ५६ भोग बनवा रखे थे और कई कीमती हीरे-मोती एवं जवाहरातों की माला भेंट में देकर श्रीकृष्ण को अपने पक्ष में लेने की योजना बना रखी थी। श्रीकृष्ण से दुर्योधन ने कहा :

''चलिये, भोजन करने।''

श्रीकृष्ण : ''मैं भोजन दो जगह पर ही करता हूँ। जहाँ प्रेम होता है वहाँ करता हूँ या बहुत भूख लगती है, प्राण संकट में होते हैं तो माँगकर भी खा लेता हूँ। अभी मुझे बहुत भूख नहीं है, प्राण संकट में भी नहीं हैं और प्रेमी का घर भी नहीं है। तुम तो खुशामदखोरी करके खिलाते हो, इसलिए तुम्हारे भोजन की मुझे जरूरत नहीं है।''

दुर्योधन : ''पकड़ लो इस कृष्ण को।''

अगर प्रेम होता तो कैद करवाता क्या ? श्रीकृष्ण चतुर्भुजी होकर ऊपर खड़े हो गये, दुर्योधन देखता ही रह गया !

बाद में श्रीकृष्ण विदुरजी के घर गये। विदुरजी घर पर नहीं थे, उनकी धर्मपत्नी थीं। श्रीकृष्ण ने कहा : ''चाची ! भूख लगी है।''

चाची भी चाची थी। केले लायी और छीलकर श्रीकृष्ण को प्यार से खिलाने लगी। भावविभोर होकर छिलके फेंकने के बजाय गुदा फेंकती जाती और गुदा खिलाने के बजाय छिलका खिलाती जाती। श्रीकृष्ण भी प्रेम से छिलके खाते गये।

इतने में विदुरजी आये और देखा कि : 'अरे ! यह तो बावरी हो गई है ! ये त्रिभुवनपति श्रीकृष्ण भी छिलके खाये जा रहे हैं !'

वे बोले : ''ये क्या कर रहे हैं, नाथ ! क्षमा करें... गलती हो गयी। लाइए, मैं खिलाऊँ।''

श्रीकृष्ण : ''अब बस, भोजन हो गया चाचा ! मैं तो प्रेम का भूखा हूँ।''

प्रेम से श्रीकृष्ण को जो भी अर्पण करते हैं, सब स्वीकार कर लेते हैं। किसीने ठीक ही गाया है :

भगवान भक्त के वश में होते आए...
दुर्योधन के मेवा त्यागे, साग विदुर घर खाये।
भगवान भक्त के वश में होते आए...

*

श्रीकृष्ण की समता

महाभारत के युद्ध के बाद भगवान श्रीकृष्ण पाण्डवों को लेकर गांधारी से मिलने गये।

गांधारी में श्रीकृष्ण के प्रति इतना कोप था, पुत्रशोक था, तप-तेज था कि उसकी आँखों पर पट्टी बँधी होने के बावजूद जब उसने उस पट्टी में से ही युधिष्ठिर की तरफ जरा-सा कोप से देखा तो उनके पैर के नख काले हो गये। लेकिन गांधारी का क्रोध श्रीकृष्ण पर था। वह अपना कोप, तप-तेज श्रीकृष्ण पर बरसाना चाहती थी। गांधारी ने श्रीकृष्ण को खूब खरी-खोटी सुनाते हुए कहा :

''कृष्ण ! तुम समर्थ थे युद्ध टालने में। तुम चाहते तो दोनों को अच्छी तरह से दबाव में लाकर, समझाकर, अपना सैन्य न देकर, कुछ भी करके युद्ध टाल सकते थे। तुमने अपने हाथों ही मेरे कुल की तबाही की। कौरव वंश का नाश तुमने ही किया। कृष्ण ! तुमको कोई कुछ कहनेवाला नहीं है। आज तक मैंने पतिपरायणा होकर जो तप किया है, आँखों में पट्टी बाँधकर, पतिपरायणा होकर जो दुर्लभ तप साधा है उस तप का उपयोग मैं तुम पर ही करूँगी। कृष्ण ! मैं तुमको शाप दूँगी।''

जब तक जीव अपने परमात्म-स्वभाव को नहीं जानता, तब तक दुःख और सुख की मिश्रित खिचड़ी खाता रहता है... सुख भोगकर गिरता है, दुःख भोगकर उठता है।

श्रीकृष्ण तभी-भी अपने दृष्टा, साक्षी, शुद्ध स्वभाव में थे। गांधारी शाप देने को उद्यत हुई है। उसका शाप अमिट है- ऐसा श्रीकृष्ण जानते थे। फिर भी श्रीकृष्ण का चित्त क्षुभित नहीं हुआ क्योंकि श्रीकृष्ण अपने शुद्ध-बुद्ध स्वभाव को, निर्द्वन्द्व आत्मा को ज्यों-का-त्यों जानते थे। शाप मिलेगा तो शरीर को मिलेगा, शरीर के पुत्र-परिवार को मिलेगा, द्वारिका में उथल-पुथल मचेगी, मुझ कृष्णस्वरूप का क्या बिगड़ेगा ? टूटेगा तो मकान टूटेगा, झोंपड़ा टूटेगा, आकाश का क्या बिगड़ेगा ? बनेगा-बिगड़ेगा तो आकृति में होगा, निराकार का क्या बनेगा और क्या बिगड़ेगा ?

श्रीकृष्ण अपनी समता में ज्यों-के-त्यों बने रहे।

गांधारी ने कोपायमान होते हुए कहा :

''कृष्ण ! आज से ठीक ३६ वें वर्ष तुम्हारे यदुवंशियों का आपस में लड़ाई-झगड़ा होगा। जैसे मेरे कुल में भाइयों को आपस में लड़ाकर तुमने उसका नाश कर दिया, ऐसे ही तुम्हारे

यदुवंशी भाई आपस में लड़ेंगे एवं यदुवंश का नाश होगा। ...और भी सुन लो... तुम्हारी मृत्यु भी बीहड़ जंगल में अकेले होगी। मेरे कौरवों को मरवानेवाले कृष्ण ! यह होकर ही रहेगा।''

श्रीकृष्ण क्या कहते हैं प्रत्युत्तर में ? श्रीकृष्ण कहते हैं :

''गांधारी ! यदुवंशियों को मारने में मनुष्य सक्षम नहीं हैं । यक्ष, गंधर्व, किन्नर एवं देवता भी उनका नाश नहीं कर सकेंगे। इसलिए वे आपस में ही एक-दूसरे को मारकर अपनी यात्रा पूरी करेंगे। यह तो जो होनी थी, वही तुमने कही। रही मेरे शरीर की बात, तो मेरे इस मायावी शरीर की मृत्यु कैसे भी हो उसमें मेरा क्या जाता है ! तुम्हारा शाप तो लगेगा यदुवंश के शरीर की आकृतियों को एवं मेरे शरीर की आकृति को। लेकिन गांधारी ! तुम धैर्य धारण करो। तुम अपने-आपमें परमेश्वर का चिंतन करके शांति पाओ। दुःखी और परेशान होने की आवश्यकता नहीं है। यह माया का खेल तो होता रहता है। एक बार तप करे, फिर तप नाश हो... फिर जन्म लेकर तप करे फिर तप नाश हो अथवा तप का फल सुख भोगे फिर तप नाश हो... इस नश्वर संसार में नश्वर पदार्थ आते-जाते रहते हैं लेकिन इस नश्वर को जो नश्वर देखता है वह शाश्वत् शांति को पा लेता है। तुम उसी शांति को पा लो। अपने परमात्मा को पा लो। जब तक जीव अपने परमात्म-स्वभाव को नहीं जानता, तब तक दुःख और सुख की मिश्रित खिचड़ी खाता रहता है- सुख भोगकर गिरता है, दुःख भोगकर उठता है। ऐसे ही जीव ८४ लाख जन्मों में भटकता रहता है।

गांधारी ! तुमने मुझे जो शाप दिया है, उससे मुझे कोई फर्क नहीं पड़ेगा। ऐसा ही हो। लेकिन मेरी एक बात सुन लो- तुम दुःखी मत रहो।''

पूरे यदुवंश के नाश का शाप दिया है गांधारी ने, फिर भी श्रीकृष्ण कह रहे हैं : 'तुम दुःखी मत हो !' कैसी सुंदर समता है श्रीकृष्ण की।

जहाँ दुःख की दाल नहीं गलती, जहाँ दुःख की पहुँच नहीं, उस दुःखहारी श्री परब्रह्म परमात्मा में... जो दृष्टा, साक्षी, सर्वेश्वर, आत्मा हो बैठा है- उसके ज्ञान, उसकी प्रीति एवं उसकी स्मृति में ही सार है।

अतः श्रीकृष्ण की समता को शत-शत प्रणाम है... काश ! तुममें भी यह दिव्य ज्ञान पाने की जिज्ञासा उभर आये। नश्वर को तो कई बार पाया-खोया, एक बार शाश्वत् को पाने की जिज्ञासा जाग जाय। तुम तो धन्य हो जाओगे, तुम्हारी दृष्टि जिस पर पड़ेगी वे भी पुण्यात्मा-धर्मात्मा होने लगेंगे। ऐसे परमेश्वरीय ज्ञान में स्थित रहनेवाले परमेश्वर-स्वरूप हो जाते हैं। उस परमेश्वरस्वरूप को फिर-फिर से प्रणाम !

''तेरी माँ ने मासिक धर्म के नियमों का उल्लंघन किया था। इस पाप के फलस्वरूप उसे कुत्ती का शरीर मिला है।''

*

ऋषि पंचमी

[ऋषि पंचमी दिनांक : १४ सितम्बर '९९]

भारत ऋषि-मुनियों का देश है। इस देश में ऋषियों की जीवन-प्रणाली का और ऋषियों के ज्ञान का अभी भी इतना प्रभाव है कि उनके ज्ञान के अनुसार जीवन जीनेवाले लोग शुद्ध, सात्त्विक, पवित्र व्यवहार में भी सफल हो जाते हैं और परमार्थ में भी पूर्ण हो जाते हैं।

ऋषि तो ऐसे कई हो गये, जिन्होंने अपना जीवन केवल **'बहुजनहिताय-बहुजनसुखाय'** बिता दिया। हम उन ऋषियों का आदर करते हैं, पूजन करते हैं। उनमें से भी वशिष्ठ, विश्वामित्र, जमदग्नि, भारद्वाज, अत्रि, गौतम और कश्यप

आदि ऋषियों को तो सप्तर्षि के रूप में नक्षत्रों के प्रकाशपुंज में निहारते हैं ताकि उनकी चिरस्थायी स्मृति बनी रहे।

ऋषियों को 'मंत्रदृष्टा' भी कहते हैं। ऋषि अपने को कर्त्ता नहीं मानते हैं। जैसे वे अपने साक्षी-दृष्टा पद में स्थित होकर संसार को देखते हैं, वैसे ही मंत्र और मंत्र के अर्थ को साक्षी भाव से देखते हैं। इसलिए उन्हें 'मंत्रदृष्टा' कहा जाता है।

ऋषि पंचमी के दिन इन मंत्रदृष्टा ऋषियों का पूजन किया जाता है। इस दिन माताएँ विशेष रूप से व्रत रखती हैं।

ऋषि की दृष्टि में तो न कोई स्त्री है न पुरुष। सब अपना स्वरूप है। जिसने भी अपने-आपको नहीं जाना है, उन सबके लिए आज का पर्व है। जिस अज्ञान के कारण यह जीव कितनी ही माताओं के गर्भ में लटकता आया है, कितनी ही यातनाएँ सहता आया है उस अज्ञान को निवृत्त करने के लिए उन ऋषि-मुनियों को हम हृदयपूर्वक प्रणाम करते हैं उनका पूजन करते हैं।

उन ऋषि-मुनियों का वास्तविक पूजन है-उनकी आज्ञा शिरोधार्य करना। वे तो चाहते हैं :

देवो भूत्वा देवं यजेत्।

देवता होकर देवता की पूजा करो। ऋषि असंग, दृष्टा, साक्षी स्वभाव में स्थित होते हैं। वे जगत के सुख-दुःख, लाभ-हानि, मान-अपमान, शुभ-अशुभ में अपने दृष्टाभाव से विचलित नहीं होते। ऐसे दृष्टाभाव में स्थित होने का प्रयत्न करना और अभ्यास करते-करते अपने दृष्टाभाव में स्थित हो जाना ही उनका पूजन करना है। उन्होंने खून-पसीना एक करके जगत को आसक्ति से छुड़ाने की कोशिश की है। हमारे सामाजिक व्यवहार में, त्यौहारों में,, रीत-रिवाजों में कुछ-न-कुछ ऐसे संस्कार डाल दिये कि अनंत काल से चली आ रही मान्यताओं के परदे हटें और सृष्टि को ज्यों-का-त्यों देखते हुए सृष्टिकर्त्ता परमात्मा को पाया जा सके। उनके प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए ऋषियों का पूजन करना चाहिए, ऋषिऋण से मुक्त होने का प्रयत्न करना चाहिये।

❁❁❁❁❁ व्रत-कथा ❁❁❁❁❁

'भविष्योत्तर पुराण' के हेमाद्रिकाण्ड में इस ऋषि पंचमी के व्रत की कथा वर्णित है।

सुमित्र नाम का एक ब्राह्मण था। उसकी पत्नी का नाम जयश्री था। वैसे तो उन्होंने अपना संसारी जीवन ठीक से निभाया, लेकिन कुदरत के जो नियम थे, जो संयम और सावधानी रखनी चाहिए थी, उसे रखने में वे चूक गये।

जिन घरों में शास्त्रोक्त नियमों का पालन होता है, लोग कुछ संयम से जीते हैं, उन घरों में तेजस्वी संतानें पैदा होती हैं।

ब्राह्मण की पत्नी जयश्री ने मासिक धर्म के नियमों को नहीं पाला। उन दिनों में भी वह भोजन बनाती थी और वह सुमित्र ब्राह्मण उसीके हाथ का बनाया हुआ भोजन करता था। समय पाकर उस ब्राह्मण की बुद्धि में जो तेज था वह क्षीण होता गया, उसकी योग्यता भी क्षीण होती गयी। मनुष्य शरीर पाकर जो उन्नति करनी चाहिए, मानव में से महेश्वर बनने का प्रयत्न करना चाहिए वह नहीं किया। पशुओं की तरह जैसा-तैसा जीवन बिताया तो फिर नीच योनि की यात्रा करनी पड़ी।

वैज्ञानिक दृष्टि से भी यह बात सिद्ध हो चुकी है कि मासिक धर्म के दिनों में स्त्री के जो परमाणु (वायब्रेशन) होते हैं वे अशुद्ध होते हैं। उसके मन-प्राण विशेषकर नीचे के केन्द्रों में होते हैं। इसलिए उन दिनों के लिए शास्त्रों में जो व्यवहार्य नियम बताए गये हैं उनका पालन करने से हमारी उन्नति

होती है।

जैसे, कोई बच्चा स्कूल में पढ़ता है, पर वह स्कूल में अभ्यास के समय ठीक से अभ्यास नहीं करता और गृहकार्य के समय ठीक से गृहकार्य नहीं करता तो भले वह अच्छे घर का लड़का हो, बुद्धिमान हो फिर भी उसकी उन्नति नहीं होती। वह पीछे रह जाता है। ऐसे ही हम संसाररूपी स्कूल में मनुष्य देह धारण करके आये हैं और धर्म, कर्म, ज्ञान को ठीक से नहीं जानते हैं तो परमात्म-स्वरूप को जानने के लिए बुद्धि की जैसी ऊँचाई पानी चाहिए, वह नहीं पा सकते हैं। इस प्रकार हम मनुष्य जन्म का अनादर करते हैं।

कोई धनवान् पिता अपने पुत्र को अपना 'फर्म' दे, धन दे लेकिन लड़का उसे सँभाल न सके और उसका दिवाला निकल जाय तो उस लड़के को नौकरी पर जाना पड़ेगा। ऐसे ही हम सच्चिदानंद परब्रह्म-परमात्मा के लड़के के रूप में मनुष्य देह पाकर आयें और उसमें उन्नति नहीं करेंगे तो हल्की योनि में जाना पड़ेगा। यह कुदरत का नियम है।

ऋषि-मुनियों का वास्तविक पूजन है उनकी आज्ञा शिरोधार्य करना। द्रष्टाभाव में स्थित हो जाना ही उनका पूजन करना है।

वह सुमित्र ब्राह्मण और उसकी पत्नी जयश्री दूसरे जन्म में बैल और कुत्ती के रूप में उसी घर में आए। सुमित्र ब्राह्मण का पुत्र था सुमति और उसकी पत्नी थी चंद्रावली।

कई व्यक्तियों का ऋणानुबंध होता है, एक-दूसरे के साथ स्नेह होता है। कर्म की गति कुछ ऐसी होती है तो अलग योनि पाकर भी जीव इकट्ठे रहते हैं। जयश्री ने मासिक धर्म के नियमों का पालन नहीं किया, इसलिए उसको ज्यादा पाप हुआ और उसको कुत्ती का शरीर मिला। उसका पति सावधान नहीं रहा, अनजाने में भूल हो गई तो उसे बैल का शरीर मिला।

ब्राह्मण का कर्त्तव्य था कि शास्त्रों के ज्ञान के मुताबिक घर में सतर्कता रखे, पवित्रता बनाये रखे। जब वह इसमें चूका तो उसे फल भोगना पड़ा।

एक दिन वह सास जयश्री जो कुत्ती बनी थी, रसोई में घुस गई तो रसोई में काम कर रही बहू ने डंडा उठाकर उसे दे मारा।

ये बातें पुराणों में लिखी हुई हैं, तो यह घटना तो उससे भी पहले घटी होगी। पुराणों को लिखे हुए भी हजारों वर्ष हो गये तो उस जमाने में मनुष्य और प्राणी आपस में एक-दूसरे की बातें समझते होंगे, यह संभव है।

जब बहू ने कुत्ती को मारा तब उसे पता नहीं था कि कुत्ती के रूप में यह मेरी सास ही है। कुत्ती और बैल के रूप में भूतपूर्व पति-पत्नी पुत्र के घर का टुकड़ा खा रहे थे। वे आपस में बात करने लगे कि : ''मुझे तो ये खूब पीट रहे हैं। हमने ऐसे कौन-से कर्म किये होंगे कि जिस बेटे को पाल-पोसकर बड़ा किया, उसीकी पत्नी यानी हमारी बहू हमें पीट रही है?''

बैल ने कहा : ''हमने कोई तो पाप कर्म किये होंगे ही।''

बहू ने ये बातें सुन लीं। उसने ब्राह्मण के बेटे यानी अपने पति को बताया। ब्राह्मण के लड़के को हुआ कि : 'अरे! ये तो मेरे माता-पिता हैं! ये इतने दुःखी! इस स्थिति में! अब तो इनकी सद्गति के लिये कुछ करना चाहिये।'

उस समय सर्वतपा नाम के सुप्रसिद्ध मुनि उस इलाके में रहते थे। वे मुनि पक्षपातरहित, अपने आत्मा में विश्रांति पाये हुए थे। ऐसे महापुरुषों का मार्गदर्शन जीवों के लिए हितकारी होता है। जो व्यक्ति राग-द्वेष से पर होकर परब्रह्म परमात्मा में स्थित होता है वह सबसे उन्नत होता है और उसका निर्देश माननेवाला व्यक्ति भी शीघ्र उन्नत हो जाता है। वे जो बात बताते हैं, वह बात उस समय सही नहीं भी लगे, फिर भी उन

महापुरुष की बात को शिरोधार्य करना चाहिए। उससे अपना कल्याण हो जाता है।

'श्रीगुरुगीता' में भी आया है कि :

गुरूणां सदसद्वापि यदुक्तं तन्न लंघयेत्।
कुर्वन्नाज्ञां दिवारात्रौ दासवन्निवसेद् गुरौ ॥

'गुरुओं की बात सच्ची हो या झूठी, परन्तु उसका कभी उल्लंघन नहीं करना चाहिए। रात और दिन गुरुदेव की आज्ञा का पालन करते हुए उनके सान्निध्य में दास बनकर रहना चाहिए।'

जैसे, बच्चा स्कूल में जाता है तब शिक्षक उसे सिखाता है कि पृथ्वी गोल है। उस वक्त उसे यह बात समझ में आये चाहे न आये किन्तु वह उसे मान लेता है। फिर आगे चलकर यह बात उसकी समझ में आ जाती है। ऐसे ही तुम आत्मज्ञानी गुरुओं की, जीवन्मुक्त महापुरुषों की बात को मान लो कि 'यह देह तुम नहीं हो। तुम ब्रह्म हो।' फिर दृढ़तापूर्वक इसके अभ्यास में लगे रहने से ब्रह्म-साक्षात्कार हो जाएगा।

कई योगाभ्यासी योगाभ्यास करते हैं लेकिन स्त्री-सेविका रखते हैं और मासिक धर्म के नियमों का पालन नहीं करते हैं तो उनके जीवन में कोई तेज नहीं दिखता।

ब्राह्मण के लड़के ने सर्वतपा मुनि के पास जाकर सारी बात बताई :

''मेरे माता-पिता कुत्ती और बैल के रूप में मेरे आँगन में रहते हैं। पुत्र का कर्त्तव्य होता है कि माता-पिता का कल्याण हो, उनका उद्धार हो इसके लिए वह प्रयत्न करे।''

उन सर्वतपा मुनि ने घड़ी भर अपने अंतर्यामी ईश्वर में विश्रांति पाई जहाँ से सारे विश्व का ज्ञान स्फुरित होता है। उस चैतन्य राम में गोता मारकर उन्होंने बताया :

''तेरी माँ ने मासिक धर्म के नियमों का उल्लंघन किया था। इस पाप के फलस्वरूप उसे कुत्ती का शरीर मिला है। तेरा पिता उसके आचरण को मूर्खता से, असावधानी से निभाता गया इसलिए उसे बैल का शरीर मिला है। मनुष्य जन्म मिला, बुद्धि मिली पर बुद्धि का सदुपयोग नहीं किया तो बुद्धू बन गया, बैल बन गया।''

सर्वतपा मुनि ने उनकी सद्गति का उपाय बताते हुए कहा : ''अब इन पशु शरीरों में तो व्रत रखने की उनकी अक्ल नहीं होती है। उन्हें चारा न देकर भूखों मारेंगे, कुत्ती को भी रोटी न देकर बाँध रखेंगे तो उनको तो पता नहीं है कि हम व्रत रख रहे हैं और जबरन व्रत रखवाने से तो पुण्य होगा नहीं। जब स्वेच्छा से व्रत रखते हैं तभी पुण्य होता है। अब उनके बदले में तुम व्रत रखना। ऋषि पंचमी के दिन उन सप्तर्षियों का चिंतन-पूजन करते हुए, अरुंधती को याद करते हुए व्रत रखना। अपने माता-पिता की गलती क्षम्य कराने के लिए उपवास, जप-ध्यान का फल उनको अर्पण करना। इससे तुम्हारे माता-पिता को ऋषिऋण से मुक्त होने का अवसर मिलेगा और उनकी सद्गति होगी।''

ब्राह्मण के बेटे और बहू ने व्रत रखा। उसका फल अपने माता-पिता को अर्पण किया तो पशुयोनि से उनकी निवृत्ति हुई और वे स्वर्ग में गये।

इस तरह ऋषि पंचमी के दिन माताएँ आम तौर पर व्रत रखती हैं। इस व्रत की कथा के अनुसार जिस किसी महिला ने मासिक धर्म के दिनों में शास्त्र-नियमों का पालन नहीं किया हो या अनजाने में ऋषि का दर्शन कर लिया हो या इन दिनों में उनके आगे चली गई हो तो उस गलती के कारण जो दोष लगता है, उस दोष का निवारण करने हेतु, इस अपराध के लिए क्षमा माँगने हेतु यह व्रत रखा जाता है।

आज कल की महिलाएँ कहेंगी : 'हम तो ये सब नहीं मानते हैं।' उसका परिणाम भी ऐसा

मिलता है कि लूले-लँगड़े, निस्तेज बच्चे पैदा होते हैं।

ऋषि-मुनियों को आर्षवृष्टा कहते हैं। उन्होंने कितना अध्ययन करने के बाद सब बातें बताई हैं! ऐसे ही नहीं कह दिया है। अभी भी आप अनुभव कर सकते हैं कि जिन दिनों घर की महिलाएँ मासिक धर्म में होती हैं उन दिनों में प्रायः आपका मन उतना प्रसन्न और उन्नत नहीं रहता है जितना और दिनों में प्रसन्न रहता है।

मैं ऐसे कई तपस्वियों को, योगाभ्यासियों को जानता हूँ जो तप करते हैं, योगाभ्यास करते हैं लेकिन स्त्री-सेविका रखते हैं और मासिक धर्म के नियमों का पालन नहीं करते हैं तो उनके जीवन में कोई तेज नहीं दिखता, उनका कोई विशेष प्रभाव भी नहीं दिखता। हालाँकि मेरे गुरुदेव ने तो उन लोगों के जितना तप-ध्यान नहीं भी किया होगा, फिर भी निगाहमात्र से दूसरों को उन्नत करने का जो सामर्थ्य उनमें था, वह दूसरों में मैंने नहीं देखा क्योंकि ऐसे मामले में मेरे गुरुदेव बहुत सतर्क रहते थे।

मासिक धर्म के दिनों में स्त्री के परमाणु अशुद्ध होते हैं। उसके मन-प्राण नीचे के केन्द्रों में होते हैं। अतः शास्त्रों में बताए गये नियमों का पालन करने से हमारी उन्नति होती है।

मेरे गुरुदेव स्त्री के उत्थान में तो विश्वास रखते थे, लेकिन आज के जैसे उत्थान में नहीं। आज कल जिसे 'उत्थान' कहा जाता है वह तो बेशरमी है। स्त्री दिन-पर-दिन लाचार होती जा रही है। स्त्री का वास्तविक उत्थान क्या है वह तो ऋषियों की निगाह से जो देखें वे ही समझ सकते हैं। मदालसा, जीजाबाई, चूड़ाला रानी, दीर्घतपा की पत्नी जैसी आदर्श चरित्रवाली स्त्रियाँ हो गईं। गार्गी और सुलभा जैसी स्त्रियाँ भरी सभा में शास्त्रार्थ करती थीं। कई स्त्रियों ने भी ऋषिपद पाया है, उपनिषदों की रचना में अपना सहयोग दिया है। आज स्त्री में वह ओज, बल, तेज कहाँ है?

जिन घरों में शास्त्रोक्त नियमों का पालन होता है, लोग कुछ संयम से जीते हैं, उन घरों में तेजस्वी संतानें पैदा होती हैं।

❀❀❀❀❀ व्रत-विधि ❀❀❀❀❀

ऋषि पंचमी का दिन त्यौहार का दिन नहीं है, व्रत का दिन है। आज के दिन अधेड़ा का दातुन मिल सके तो करना चाहिए जिससे दाँतों में छिपे हुए कीटाणु आदि निकल जायें और पायरिया जैसी बीमारियाँ नहीं हों तथा दाँत मजबूत हों। इस तरह दाँतों की तंदुरुस्ती का ख्याल रखते हुए यह बात बताई गयी हो, ऐसा भी हो सकता है।

इस दिन शरीर पर गाय के गोबर का लेप करके नदी में १०८ गोते मारना होता है। गोबर के लेप से शरीर का मर्दन करते हुए स्नान करने से रोमकूप खुल जायें, चमड़ी पर से कीटाणु आदि का नाश हो जाए और साथ में एक्युप्रेशर-एक्युपंक्चर व मसाज भी हो जाये- ऐसा उद्देश्य हो सकता है। १०८ बार गोते मारने से ठंडी-गर्मी या वातावरण की प्रतिकूलता झेलने की जो रोगप्रतिकारक शक्ति शरीर में है उसे जागृत करने का हेतु भी हो सकता है। अब आज के जमाने में नदी में जाकर १०८ बार गोते मारना सबके लिए तो संभव नहीं है, इसलिए ऐसा आग्रह भी मैं नहीं रखता हूँ लेकिन स्नान करो तब १०८ बार हरिनाम लेकर अपने दिल को तो हरिरस से जरूर नहलाओ।

स्नान के बाद सात कलश स्थापित करके सप्त ऋषियों का आवाहन करते हैं। उन ऋषियों की पत्नियों का स्मरण करके, उनका आवाहन, अर्चन-पूजन करते हैं। जो ब्राह्मण हो, ब्रह्मचिंतन करता हो, उसे सात केले घी-शक्कर मिलाकर

देने चाहिए- ऐसा विधान है। अगर कुछ भी देने की शक्ति नहीं है और न दे सकें तो कोई बात नहीं है, पर दुबारा ऐसा अपराध नहीं करेंगे यह दृढ़ निश्चय करना चाहिए। ऋषि पंचमी के दिन बहनें मिर्च, मसाला, घी, तेल, गुड़, शक्कर, दूध नहीं लेतीं। उस दिन लाल वस्त्र का दान करने का विधान है।

आज के दिन कश्यप, अत्रि, भारद्वाज, विश्वामित्र, वशिष्ठ, जमदग्नि एवं गौतम- इन सप्तर्षियों को प्रणाम करके प्रार्थना करें कि :

''हमसे कायिक, वाचिक एवं मानसिक जो भी भूलें हो गयी हों, उन्हें क्षमा करना। आज के बाद हमारा जीवन ईश्वर के मार्ग पर शीघ्रता से आगे बढ़े, ऐसी कृपा करना।''

हमारी क्रियाओं में जब ब्रह्मसत्ता आती है, हमारे रजोगुणी कार्य में ब्रह्मचिंतन आता है तब हमारा व्यवहार भी तेजस्वी, देदीप्यमान हो उठता है। खान-पान-स्नानादि तो हर रोज करते हैं, पर व्रत के निमित्त उन ब्रह्मर्षियों को याद करके सब क्रिया करें तो हमारी लौकिक चेष्टाओं में भी उन ब्रह्मर्षियों का ज्ञान छलकने लगेगा। उनके अनुभव को अपना अनुभव बनाने की ओर कदम आगे रखें तो ब्रह्मज्ञानरूपी अति अद्भुत फल की प्राप्ति भी हो सकती है।

ऋषि पंचमी का यह व्रत हमें ऋषिऋण से मुक्त होने के अवसर की याद दिलाता है। लौकिक दृष्टि से तो अपराध के लिए क्षमा माँगने का और कृतज्ञता व्यक्त करने का अवसर है, पर सूक्ष्म दृष्टि से तो अपने जीवन को ब्रह्मपरायण बनाने का संदेश देता है। ऋषियों की तरह हमारा जीवन भी संयमी, तेजस्वी, दिव्य, ब्रह्मप्राप्ति के लिये पुरुषार्थ करनेवाला हो- ऐसी मंगल कामना करते हुए ऋषियों और ऋषिपत्नियों को मन-ही-मन आदरपूर्वक प्रणाम करते हैं...

*
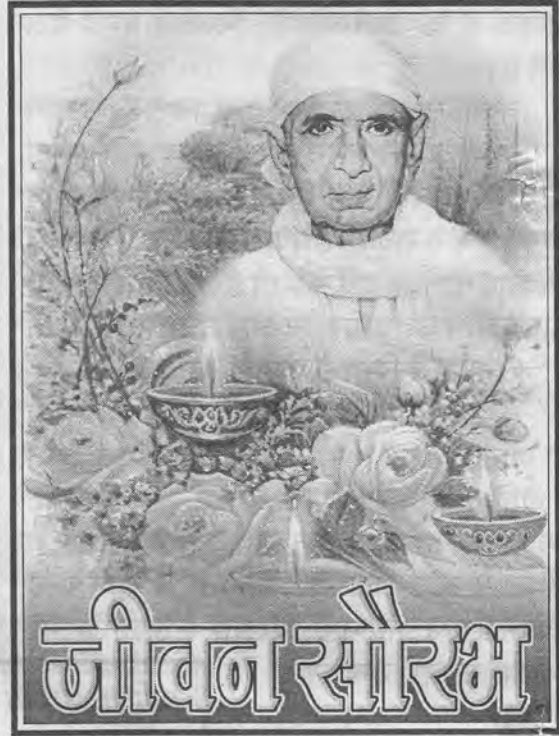
योगसिद्ध ब्रह्मलीन ब्रह्मनिष्ठ
प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद स्वामी श्री

लीलाशाहजी महाराज : एक दिव्य विभूति

[गतांक का शेष]

२२ सितम्बर, १९७३ में नंदभई से आगरा एवं वहाँ से सौराष्ट्र पधारे। जब वे अजमेर से गुजरे तब उनके दर्शन के लिए असंख्य भक्त स्टेशन पर आये थे। उन लोगों को दर्शन-सत्संग देकर 'हरि ॐ तत् सत्' का जप करवाया था।

जूनागढ़ पहुँचने के बाद पूज्य स्वामी श्री लीलाशाहजी महाराज सोमनाथ एवं अन्य अनेक शहरों में पधारे थे। फिर जूनागढ़ आकर वहाँ 'अखिल भारतीय लोअर सिंधी पचायत सम्मेलन' का उद्घाटन किया। सम्मेलन के बाद वे पालनपुर पधारे। पालनपुर से २३ अक्तूबर को जेतपुर पधारे। जेतपुर से सिद्धपुर होते हुए वहाँ सिंधी

धर्मशाला की नींव डालकर पुनः पालनपुर पधारे। २५ अक्तूबर को पालनपुर से कार द्वारा आदिपुर में टहलराम टेकचंद की बरसी में उद्घाटन के लिए पधारे। वहाँ शरीर ठीक न होने की वजह से आधा मिनट ही सत्संग किया। उस रात्रि को पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज के शरीर में काफी तकलीफें थीं। शरीर की अस्वस्थता के कारण बरसी में विघ्न न आये इसलिए वे ३१ अक्तूबर को कार द्वारा पालनपुर पधार गये। पालनपुर में दूसरे दिन तबियत कुछ ठीक लगी। हमेशा की तरह वे जंगल में घूमने भी गये।

परंतु...

यह संसार हर पल नाश की तरफ ही जा रहा है। मृत्यु से किसकी देह बच पायी है ? जिस शरीर ने पंचमहाभूतों से जन्म लिया है उसे जल्दी या देरी से उन पंचमहाभूतों में वापस मिलने जाना ही पड़ता है। गुरु तेगबहादुरजी ने भी फरमाया है :

पांच तत को तनु रचिओ, जानहु चतुर सुजान।
जिह ते उपजिओ नानका लीन ताहि मैं मानु ॥

यह शरीर पाँच तत्त्व- पृथ्वी, जल, तेज, वायु एवं आकाश से उत्पन्न हुआ है और उसीमें पुनः लीन हो जानेवाला है। संसार में जो भी शरीर उत्पन्न हुआ है उसका नाश अवश्यंभावी है परंतु आत्मा तो अमर है।

श्रीमद्भगवद्गीता में भी कहा गया है :

न जायते म्रियते वा कदाचि-
न्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो
न हन्यते हन्यमाने शरीरे ॥

'यह आत्मा किसी काल में भी न तो जन्मता है और न मरता ही है तथा न यह उत्पन्न होकर फिर होनेवाला ही है, क्योंकि यह अजन्मा, नित्य, सनातन और पुरातन है। शरीर के मारे जाने पर भी यह नहीं मारा जाता।' **(गीता : २.२०)**

यह हकीकत जिस प्रकार सामान्य जीवों के लिए लागू पड़ती है उसी प्रकार संतों, महात्माओं, सिद्ध पुरुषों एवं अवतारी पुरुषों को भी लागू पड़ती है। संतों की देह को भी प्रकृति का नियम लागू पड़ता ही है। उनकी देह को भी प्रारब्ध भुगतना पड़ता है।

पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज का स्वास्थ्य २ एवं ३ नवम्बर तक ठीक था। उस समय उनके सबसे निकट के एवं लाड़ले, प्रिय सत्‌शिष्य परम पूज्य श्री आसारामजी बापू उनके साथ ही थे। उन्होंने पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज की अंतिम यात्रा का वर्णन करते हुए कहा है :

''३ नवम्बर, १९७३ की रात्रि को मेरे परम पूज्य सद्‌गुरुदेव का स्वास्थ्य बिगड़ा। पूज्यश्री ने मुझे एवं वीरभान को बुलाया। उस समय उनका स्वास्थ्य ज्यादा बिगड़ा हुआ दिखाई दिया। उन्होंने कहा : ''अब जानेवाले हैं।''

उन्होंने प्रेमी भक्तों को आश्वासन दिया। रात्रि के तीन बजे उनका श्वास तेजी से चलने लगा। डॉक्टर को बुलाया। एक शब्द बोलना भी मुश्किल लगता था। उन्होंने डॉक्टर से कहा :

''अब कुछ नहीं सुधरेगा।''

फिर मुझे इशारे से गुरुदेव ने कहा : ''इसको (डॉक्टर को) एक मीठा सेवफल दे।''

डॉक्टर ने जाते समय कहा : ''अब स्वास्थ्य धीरे-धीरे ठीक हो जायेगा।''

परंतु दर्द बढ़ता ही गया। साढ़े चार बजे हमने दूसरे डॉक्टरों को बुलाने की आज्ञा माँगी। पूज्य श्री गुरुदेव ने कहा :

''देह को छोड़ो। यह भले अपना प्रारब्ध भुगते।''

फिर हमारी नम्र प्रार्थना सुनकर 'हाँ' कह दिया। हमने डॉक्टरों को बुलाने की व्यवस्था की। किन्तु तरतीव्र प्रारब्ध को कौन टाल सकता है ? हम रात के १२ से सुबह के सात बजे तक जगे। दया के सागर स्वामीजी ने हमसे कहा :

''एक-एक करके बारी-बारी से तुम दोनों स्नान करके वापस आ जाओ।'' **(क्रमशः)**

मानवता की महक

※ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ※

सौराष्ट्र के माणावदर गाँव में एक महामानव रहते थे, जिनका नाम था मयाराम भट्ट। उनके पास एक विधवा-अनाथ स्त्री आयी। वह अपना गुजारा लोगों के बर्तन माँज एवं आटा पीसकर करती थी। उसने मयाराम भट्ट से कहा :

''मैं चार धाम की यात्रा करने जा रही हूँ और वहाँ राम तत्त्व में जागे हुए किसी संत-महापुरुष के वचन सुनूँगी। मेरे पास सोने का एक कड़ा है। पूरे माणावदर में एक आप ही मुझे महामानव दिखते हैं। अतः वह कड़ा मैं आपके पास रखकर जाना चाहती हूँ। मयाराम ! मुझ अबला का यह कड़ा आप अपने पास रख लीजिए।''

मयाराम भट्ट ने उस विधवा स्त्री का कड़ा लेकर अपने पास सुरक्षित रख लिया। जाते-जाते वह कहती गयी कि : ''पाँच-छः साल इंतजार करना मेरे भाई ! नहीं तो किसी अच्छे कार्य में इसका उपयोग कर लेना।''

वह जमाना पैदल यात्रा का था। अतः लम्बी यात्रा करने में बहुत समय लगता था। दिन बीते, सप्ताह बीते, साल बीते... इस तरह पूरे छः साल बीत गये। छः साल के बाद वह विधवा माई आयी एवं मयाराम से बोली : ''भाई ! मुझे पहचाना ? मैं यात्रा करके लौट आयी हूँ। मैं आपके पास स्वर्ण का कड़ा छोड़कर गयी थी।''

मयाराम : ''हाँ हाँ... ''

विधवा माई : ''अच्छा... तो जहाँ हो तिजोरी-विजोरी में, वहाँ से मँगवाकर रखना। मैं तीन दिन के बाद आऊँगी।''

मयाराम भट्ट ने जाँच-पड़ताल करवायी तो तिजोरी के एक खाने में एक ही कड़ा पड़ा था। मयाराम को हुआ कि : 'माइयाँ चूड़ियाँ पहनती हैं तो दोनों हाथों में पहनती हैं। ये कड़े भी तो दो होंगे। कान के कुण्डल दो होते हैं, पैरों की पायल दो होती हैं, दोनों हाथों में चूड़ियाँ होती हैं, ऐसे ही कड़े-कंगन भी तो दोनों हाथों में पहने जाते हैं। दो दे गई होगी, वर्ष बीत गये... मुझसे शायद लेने-देने या रखने में गलती हो गयी है। माई को बोलूँगा कि 'एक कड़ा है' तो वह सोचेगी कि 'दूसरा कड़ा बेइमानी से हड़प कर लिया !' अरे, यह कैसे हो सकता है ?'

उन्होंने कड़ा लिया और सुनार से कहा :

''ठीक इसी माप का दूसरा कड़ा बना दे।''

मयाराम भट्ट ने अपने पैसे देकर ठीक वैसा ही दूसरा कड़ा दो दिन के अंदर बनवा लिया।

तीसरे दिन वह विधवा माई कड़ा लेने के लिए आयी तो मयाराम भट्ट ने उसे दो कड़े थमा दिये।

माई ने कहा : ''यह क्या कर रहे हो ? मेरा तो एक ही कड़ा था।''

मयाराम : ''नहीं, दो थे। एक कड़ा थोड़े ही पहना जाता है माई ! तुम भूल रही हो, दोनों ही तुम्हारे हैं।''

माई : ''नहीं नहीं, दोनों मेरे नहीं हैं। मेरा तो एक ही है।''

मयाराम : ''हम बोल चुके कि दोनों तुम्हारे हैं तो दोनों तुम्हारे हो गये। अब ले जाओ। हम अपनी जुबान से नहीं मुकरते।''

माई : ''वाह रे वाह ! तुम जुबान नहीं मुकरते तो क्या मैं मुफ्त का ले जाऊँगी ? मैं तो अपना

एक ही कड़ा ले जाऊँगी।''

मयाराम : ''मैं तुमको दोनों लिये बिना नहीं जाने दूँगा।''

दोनों में कहा-सुनी हो गयी, मधुर वाक्युद्ध छिड़ गया।

माई : ''आप मुझे चाहे जैसे समझाने की कोशिश करो भाई ! मेरा तो एक ही कड़ा था अतः मैं तो एक ही ले जाऊँगी।''

मयाराम : ''बहन ! तुम चाहे जो कहो लेकिन मैंने तुम्हें खुलेआम कह दिया है कि दोनों कड़े तुम्हारे हैं। अब क्या मैं अपनी जबान पर राख डालूँगा ? क्या मैं अपने वचन से मुकर जाऊँगा ? यह नहीं हो सकता।''

आखिरकार दोनों की त्यागमय लड़ाई की बात राजदरबार में पहुँची। उस वक्त वहाँ का नवाब था रहमत खान। उस रहमत खान पर भी अल्लाह की कोई रहमत बरसी। वह भी पशुता से बहुत दूर निकल चुका था और मानवता की ऊँचाइयों को मानों छू चुका था। किन्तु स्वाँग तो उसने किया क्रोध का। उसने दोनों को बुलाया और दोनों की बात सुनी। अंदर से प्रसन्न लेकिन बाहर से क्रोध का नाटक करते हुए नवाब ने कहा : ''यह क्या बात है ? बीच बाजार में इतना शोर मचा दिया ? अब तुम्हारा न्याय कल होगा। कल दोनों को दण्ड दिया जायेगा। कल सुबह नौ बजे आ जाना।''

खबरें फैलते ही पूरे माणावदर में हाहाकार मच गया। दूसरे दिन उत्सुकतावश अनेकों लोग नवाब का न्याय देखने के लिये आये। राजदरबार लोगों की भीड़ से खचाखच भर गया। मयाराम भट्ट एवं वह विधवा माई दोनों उपस्थित हुए। नवाब ने कहा : ''ऐ मयाराम भट्ट ! तुमने दूसरा कड़ा बनवाया यह बात मैंने सुनी है और अब तुम कहते हो कि 'मैं अपने बोले हुए वचनों से मुकरूँगा नहीं, चाहे मेरा सिर ही क्यों न कट जाये।' ...तो तुममें इतना त्याग और मानवता कहाँ से आयी ?''

मयाराम : ''नवाब ! मैं अपने सद्गुरु के यहाँ सत्संग सुनने जाता था। गीता एवं भागवत का ज्ञान अमरता की खबरें देता है तो मरनेवाली वस्तुओं के लिए अपनी जुबान झूठी क्यों करना ? मेरे सद्गुरु की कृपा से गीता-भागवत का यह दिव्य ज्ञान मुझमें कूट-कूटकर भरा है।''

फिर नवाब ने माई से पूछा :

''ऐ माई ! तू किसीके बर्तन-भाण्डे माँजकर अपना गुजारा करती है और तुझे पाँच तोला सोना मिल रहा है, फिर भी इन्कार करती है ? तू इतना त्याग कहाँ से लाई ?''

माई : ''मैं जब नन्हीं-सी बच्ची थी, तब मेरी माँ मुझे कथा-वार्त्ताएँ सुनाकर कहती थी कि 'बेटी ! सदा हक का खाना। नाहक का खाने से मन नाहक के संकल्प-विकल्प में पड़ेगा, नाहक के लड़ाई-झगड़ों में, नाहक के ऐशो-आराम एवं व्यसनों में पड़ेगा। बेटी ! हक का ही खाना।' मेरी माँ हरिकथा में जाती थी और मुझे उसी माँ के संस्कार मिले हैं।''

नवाब : ''फिर मेरी भी मानवता यही कहती है कि बीच राज्य के शाही मैदान में जहाँ शाही सभा होती है वहाँ मयाराम भट्ट ! तुम अपने गुरुदेव को बुलाओ। तुम और यह माई दोनों मिलकर यहाँ एक ऐसा संस्कार केन्द्र, मंदिर या आश्रम बनवा दो, जिसमें अन्य लोग भी संस्कार पा सकें ताकि मेरा नवाब होना सार्थक हो जाये। मेरे राजदण्ड से मनुष्य संस्कारित न हो सकेंगे। धर्म का उपदेश ही उन्हें संस्कारित कर सकेगा, वे सच्चे मानव बन सकेंगे और मानव से महेश्वर बनकर परमानंद को पा सकेंगे। यह काम तुम दोनों ही कर सकते हो। मैं अपने राज्य की जमीन इसके लिए अर्पण करता हूँ।''

आज भी माणावदर में, बीच शहर में बना मंदिर यह खबर दे रहा है कि मयाराम भट्ट एवं माई के त्याग के साथ नवाब ने भी अपने कर्त्तव्य एवं त्याग का परिचय दिया।

✻ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✻

हक की रोटी

गुरु नानक घूमते-घामते एमनाबाद पहुँचे। वहाँ एक अमीर सेठ रहता था मलिक भागो। नानकजी प्रसिद्ध संत थे, अतः उसने नानकजी को संदेशा भेजा : ''हे फकीर ! इस द्वार पर बड़े-बड़े संत, पीर, औलिया आये हैं। परसों का दिन शुभ है। आप मेरा आमंत्रण स्वीकार करें एवं उस दिन आप मेरे यहाँ भोजन करने के लिए पधारें।''

न्यौता भेजकर सेठ तैयारियाँ करने लगा। न्यौते का दिन आया किन्तु नानकजी उसके यहाँ न गये। एक आदमी बुलाने आया :

''फकीर ! चलिये।''

नानकजी : ''हाँ, आते हैं।''

थोड़ी देर में दूसरा आदमी बुलाने आया, तीसरा आदमी आया किन्तु नानकजी न गये। सेठ को हुआ कि : 'ये कैसे फकीर हैं ! मेरे पास आते तो इनका नाम होता कि इतने बड़े सेठ के यहाँ भोजन करने का अवसर मिला... साथ में मैं दक्षिणा भी देता और फकीर का काम बन जाता।'

...लेकिन उस मूर्ख को पता नहीं कि फकीर उसका भोजन स्वीकार करते तो उसका भाग्य बन जाता। वह फकीर का क्या काम बनाता ? फकीर ने तो अपना असली काम बना रखा था।

यह शुक्र कर कि वे तेरा स्वीकार कर लेते...

देर होती देखकर सेठ खुद ही आया एवं बोला : ''फकीर ! बहुत देर हो गयी। आप चलिए भिक्षा लेने।''

नानकजी : ''अभी समय नहीं है भिक्षा-विक्षा का। इधर ही टुकड़ा पा लेंगे।''

सेठ को हुआ कि : 'अब तो मेरी इज्जत का सवाल है। कैसे भी करके, इधर लाकर भी इनको भिक्षा करवानी पड़ेगी। यहीं पकवान आदि का थाल मँगवाना पड़ेगा। नगर में नाम होगा कि फकीर मेरे घर का भोजन करके गये। मेरे घर से कोई साधु खाली हाथ नहीं गया।' यह सोचकर उसने वहीं पर पकवान से भरा थाल मँगवा लिया। इतने में एक गरीब भक्त लालो भी अपने घर से भिक्षा ले आया-सूखी रोटी और तांदुल की भाजी।

यह देखकर सेठ को हुआ कि मैं पकवानों से भरा थाल ले ही आया हूँ तो यह क्यों लाया ? नानकजी ने एक हाथ में उठायी लालो की सूखी रोटी और तांदुल की भाजी एवं दूसरे हाथ में उठाये सेठ के पकवान। ज्यों ही नानकजी ने लालो की रोटी दबायी तो उसमें से दूध की धार निकल पड़ी और सेठ के पकवान को दबाया तो रक्त की धार बह चली। लोग आश्चर्यचकित हो उठे ! सेठ भागो भी दंग रह गया कि मेरे व्यंजनों से रक्त की धार और लालो की सूखी रोटी से दूध की धार ! यह कैसे हुआ ?

नानकजी : ''लालो ने पसीना बहाकर हक की कमाई की है इसलिए इसका अन्न दूध के समान है, जबकि तुमने गरीबों से ब्याज लेकर, उनका खून चूसकर संपत्ति इकट्ठी की है इसलिए तुम्हारे अन्न से रक्त की धार बह चली है।''

सेठ मलिक भागो का सिर शर्म से झुक गया।

हराम के धन के ऐश-आराम से हक की रूखी-सूखी रोटी भी हितकारी है।

✻

सूखा नारियल

फरीद बड़े फक्कड़ संत थे। एक बार एक व्यक्ति ने उनके पास जाकर कहा :

''महाराज ! ईसा मसीह को क्रॉस पर चढ़ना पड़ा और उनके हाथ-पैरों में खीलें ठोक दी गयीं... मंसूर को भी शूली पर चढ़ना पड़ा... सुकरात को जहर दे दिया गया लेकिन 'हम मर रहे हैं' ऐसा महसूस उनको क्यों नहीं हुआ ? 'हम मौत को देख रहे हैं... हमारा कुछ नहीं बिगड़ सकता...' ऐसा वे क्यों बोलते थे ? हमें तो एक छोटी-सी सूई चुभती है तब भी पीड़ा होती है किन्तु उन्हें शूली पर चढ़ने पर भी दुःख क्यों न हुआ ?''

फरीद ने अपने सामने पड़े हुए नारियल के ढेर में से एक नारियल उसे देते हुए कहा :

''जा, इसको तोड़कर आ, लेकिन ध्यान रखना कि गिरी साबूत रहे।''

वह व्यक्ति गया और नारियल तोड़ने की युक्ति का विचार करने लगा। नारियल हरा था अतः बिना गिरी टूटे नारियल कैसे टूट सकता था ? काफी देर सोच-विचारकर वह पुनः बाबा फरीद के पास आया और बोला :

''महाराज ! यह काम मुझसे नहीं हो पायेगा। जैसे नारियल का टूटना होगा, वैसे ही भीतर की गिरी भी टूट जायेगी।''

फरीद ने सूखा नारियल देते हुए कहा :

''इसको तोड़कर आ लेकिन इसकी भी गिरी साबूत ही रहे।''

उस व्यक्ति ने नारियल हिलाकर देखा। नारियल सूखा था। अंदर की गिरी के हिलने की आवाज आ रही थी। वह बोला :

''महाराज ! इसकी गिरी तो बिना तोड़े भी साबूत ही है। हिलाने मात्र से ही पता चल जाता है।''

फरीद : ''उस हरे नारियल को तोड़ने से उसकी गिरी भी टूट जाती क्योंकि वह गिरी अपने बाह्य स्थूल भाग से चिपकी थी। यह सूखा हुआ नारियल है। धीरे-धीरे अपने बाह्य भाग से, छिलके से, गिरी की पकड़ हट गयी है। इसी प्रकार मंसूर, सुकरात आदि सूखे नारियल थे और तुम हरे नारियल हो। वे लोग केवल गिरी ही बचे थे, केवल ब्रह्मानंदस्वरूप ही बचे थे। उनका स्थूल और सूक्ष्म शरीर देखने मात्र का था जबकि तुम्हारी गिरी अभी चिपकी हुई है।

जप-ध्यान, प्राणायाम आदि का फल यही है कि गिरी अलग हो जाये। कीमत तो गिरी की ही होती है, बाकी तो बाहर का आवरण दिखावा मात्र होता है। कीमत तुम्हारे बाह्य सौंदर्य की नहीं, वरन् भीतर स्थित अंतर्यामी परमात्मा की ही है।

ऐसे सूखे नारियल की तरह ब्रह्म में प्रतिष्ठित फकीर यदि तुम्हारी ओर केवल निहार भी लें और तुम उन्हें झेल पाओ तो उसके आगे करोड़ों की संपत्ति का मूल्य भी कौड़ी के समान है।

*

महत्त्वपूर्ण सूचना

ज्ञात हुआ है कि कहीं-कहीं पर समिति के पदाधिकारी 'कीर्तन यात्रा व घरों में सत्संग किसको पूछकर करते हो ?' ऐसा कहकर सेवाभावी साधकों व भक्तों को मना करते हैं। उन पदाधिकारियों को अपने पद व अहं के पोषण में रुचि होती है। साधक, भक्त, शिष्यगण ऐसे लोगों की रोक-टोक स्वीकार नहीं करें। सत्संग, कीर्तन कोई भी कहीं भी करवा सकता है। हरिनाम जपना-जपाना, हरिकथा सुनना-सुनाना, निःस्वार्थ भाव से निष्कपट भाव से इस दैवी कार्य में लगना-लगाना बहुत उत्तम है। इसमें समिति के पदाधिकारी रोक-टोक लगायें, यह उचित नहीं माना जायेगा।

यह पूज्यश्री का आदेश है।

– संपादक

एकादशी-माहात्म्य

[अजा एकादशी : ६ सितम्बर'९९]

युधिष्ठिर ने पूछा : ''जनार्दन ! अब मैं यह सुनना चाहता हूँ कि भाद्रपद मास के कृष्ण पक्ष में कौन-सी एकादशी होती है ? कृपया बताइये ।''

भगवान श्रीकृष्ण बोले : ''राजन् ! एकचित्त होकर सुनो । भाद्रपद मास के कृष्णपक्ष की एकादशी का नाम 'अजा' है । वह सब पापों का नाश करनेवाली बतायी गयी है । भगवान हृषीकेश का पूजन करके जो इसका व्रत करता है उसके सारे पाप नष्ट हो जाते हैं ।

पूर्वकाल में हरिश्चन्द्र नामक एक विख्यात चक्रवर्ती राजा हो गये हैं, जो समस्त भूमण्डल के स्वामी और सत्यप्रतिज्ञ थे । एक समय किसी कर्म का फलभोग प्राप्त होने पर उन्हें राज्य से भ्रष्ट होना पड़ा । राजा ने अपनी पत्नी और पुत्र को बेच दिया । फिर अपनेको भी बेच दिया । पुण्यात्मा होते हुए भी उन्हें चाण्डाल की दासता करनी पड़ी । वे मुर्दों का कफन लिया करते थे । इतने पर भी नृपश्रेष्ठ हरिश्चन्द्र सत्य से विचलित नहीं हुए ।

इस प्रकार चाण्डाल की दासता करते हुए उनके अनेक वर्ष व्यतीत हो गये । इससे राजा को बड़ी चिन्ता हुई । वे अत्यन्त दुःखी होकर सोचने लगे :

'क्या करूँ ? कहाँ जाऊँ ? कैसे मेरा उद्धार होगा ?' इस प्रकार चिन्ता करते-करते वे शोक के समुद्र में डूब गये ।

राजा को शोकातुर जानकर कोई मुनि उनके पास आये । वे महर्षि गौतम थे । श्रेष्ठ ब्राह्मण को अपने पास आया हुआ देखकर नृपश्रेष्ठ ने उनके चरणों में प्रणाम किया और दोनों हाथ जोड़ गौतम के सामने खड़े होकर अपना सारा दुःखमय समाचार कह सुनाया ।

राजा की बात सुनकर गौतम ने कहा :

''राजन् ! भादों के कृष्णपक्ष में अत्यन्त कल्याणमयी 'अजा' नाम की एकादशी आ रही है, जो पुण्य प्रदान करनेवाली है । इसका व्रत करो । इससे पाप का अन्त होगा । तुम्हारे भाग्य से आज के सातवें दिन एकादशी है । उस दिन उपवास करके रात में जागरण करना ।''

ऐसा कहकर महर्षि गौतम अन्तर्धान हो गये ।

मुनि की बात सुनकर राजा हरिश्चन्द्र ने उस उत्तम व्रत का अनुष्ठान किया । उस व्रत के प्रभाव से राजा सारे दुःखों से पार हो गये । उन्हें पत्नी पुनः प्राप्त हुई और पुत्र का जीवन मिल गया । आकाश में दुन्दुभियाँ बज उठीं । देवलोक से फूलों की वर्षा होने लगी ।

एकादशी के प्रभाव से राजा ने निष्कण्टक राज्य प्राप्त किया और अन्त में वे पुरजन तथा परिजनों के साथ स्वर्गलोक को प्राप्त हो गये ।

राजा युधिष्ठिर ! जो मनुष्य ऐसा व्रत करते हैं, वे सब पापों से मुक्त हो स्वर्गलोक में जाते हैं । इसके पढ़ने और सुनने से अश्वमेध यज्ञ का फल मिलता है ।''

['पद्मपुराण' में से]

शारीरिक कष्ट पड़े तब ऐसी भावना हो जाये कि : 'यह कष्ट मेरे प्यारे प्रभु की ओर से है...' तो वह कष्ट तप का फल देता है ।

गुरु-महिमा

वत्स ! गुरु में पूर्ण विश्वास रखो । उनकी कृपा से, उनकी ज्ञानज्योति से तुम्हारी अंतरात्मा पुनर्जीवित हुई है । उन्होंने तुम्हें ढूँढ़ा और पूर्ण बनाया है । गुरु का साक्षात्कार शिष्य के ऊपर वर्षा की झड़ी-सा गिरता है । यह अबाधित है और इसे कोई रोक नहीं सकता । तुम्हारे लिए उनका प्रेम असीम है । वे तुम्हारे लिए दूर से दूर तक जायेंगे । वे तुम्हें कभी भी नष्ट नहीं होने देंगे । उनका प्रेम ही उनकी दिव्यता का प्रमाण है । उनका शाप भी दूसरे रूप में आशीर्वाद ही है ।

गुरु का साक्षात्कार तुम्हारे लिए प्रत्यक्ष और मूर्तिमान् है । उन्हीं की प्रकृति-रूपान्तर से ही तुम ईश्वर को देखते हो ।

तुम्हारे लिए अन्य मार्ग नहीं है । अपने को गुरु के प्रति पूर्णतया और सर्वभावेन समर्पित कर दो । अन्तस्तल में जो कुछ है वह ईश्वर ही है । जिसने उसकी प्रकृति का साक्षात्कार किया है वह सबसे बड़ा देव है । मनुष्य, जिसने आत्म-साक्षात्कार किया है, उसकी महान् महिमा को देखते हुए उस साक्षात्कार को बहुत रूपों में देखता है । गुरु मनुष्य से विशेष होते हैं । उनके द्वारा ही ईश्वर के संपूर्णभाव प्रकाशित होते हैं । क्या वे स्वयं शिव नहीं हैं ? स्वयं शिव महान् गुरु का एक भागमात्र हैं । अपने गुरु को शिव समझकर ध्यान करो । उन्हें अपना इष्ट समझकर ध्यान करो और आत्म-साक्षात्कार की शुभ घड़ी में तुम समग्र प्रकृति को अपने इष्ट में मिली हुई पाओगे ।

तुम्हारे सामने एक पुरुष खड़े हैं जो आत्म-साक्षात्कार के द्वारा अवतीर्ण ईश्वर हैं । तब फिर तुम्हें निराकार ईश्वर अथवा दैवी संकल्पों, भावों से क्या मिलेगा ? जहाँ भी जाओगे वे तुम्हारे पीछे चलेंगे । मनुष्य जाति की सहायता के लिए ही उन्होंने निर्वाण तक को त्याग दिया है । इस रूप में वे दूसरे बुद्ध ही हैं । जिसने उनके स्वर को पहचाना है, वह उनके व्यक्तित्व को और भी अधिक सत्य तथा शक्तिमान् बना देता है । ब्रह्मज्ञान प्राप्त करके वह अमानुषी जीवन और ज्ञान से संपन्न होता है ।

जो ब्रह्म से एक हो चुके हैं उन्हें सब देवता नमन करते हैं । अपनी गुरुपूजा की दृष्टि से ही विद्यमान संपूर्ण दिव्यता को देखो । इस प्रकार सब एक बन जायेगा और सर्वोच्च अद्वैत ज्ञान प्राप्त होगा, क्योंकि गुरु और भी अधिक बड़े दृष्टिकोण से दिखेंगे । तुम्हारे निज के ज्ञान और भक्ति की बुद्धि के अनुसार ही वे दीख पड़ेंगे ।

व्यक्तित्व के उत्तम विकास से ही सर्वोच्च निःस्वार्थता, जो आत्मा है, पहचानी जाती है । वहाँ गुरु, ईश्वर और तुम भी, इतना ही नहीं, समस्त सृष्टि एक हो जाती है । यही लक्ष्य है । गुरु को अनंत के दृष्टिकोण से देखो । यही बुद्धिमत्ता है । गुरुभक्ति से ही तुम श्रेष्ठ मार्ग पर चलते हो ।

एक अर्थ में दैवी मनुष्य शुद्ध ईश्वरत्व से भी अधिक सत्य है । पिता को केवल पुत्र के द्वारा ही समझा जा सकता है । ईश्वर की पूजा करने से पहले भी मनुष्य की पूजा करो । मनुष्य की ब्रह्म-साक्षात्कार-भावना से पृथक् ईश्वर कहाँ है ? शिष्य के लिये गुरुपूजा सर्वोपरि है क्योंकि उनके

व्यक्तित्व की पूजा में ही व्यक्तित्व का भी सम्पूर्ण ज्ञान अन्त में नष्ट हो जायेगा । आध्यात्मिक दृष्टिकोण विस्तृत होता जायेगा । पहले गुरु की शारीरिक उपस्थिति आवश्यक है, तब गुरु की साकार पूजा होती है । दूसरा कदम इस शारीरिक उपस्थिति से और गुरु की पूजा से भी परे जाना है, क्योंकि वे शिक्षा देते हैं कि शरीर आत्मा नहीं है । शिष्य को बच्चे के समान ही शिक्षा देनी पड़ती है । शारीरिक भाव से गुरु के सन्देशों और विचारों को पहचानना, व्यक्तित्व से भाव की ओर जाना, मन और शरीर उत्तम और घनिष्ठ सम्बन्धों में नहीं गिने जा सकते ।

गुरु के स्वरूप में शिष्य के व्यक्तित्व का अधिकाधिक लय होता है और गुरु का व्यक्तित्व अधिकाधिक उसमें लय हुआ दिखाई पड़ता है, जिसमें उनका शरीर व्यक्त था । तब सर्वोत्कृष्ट एकता प्राप्त होती है । गुरु और शिष्य के द्वैत-व्यक्तित्व की धाराएँ अनन्त ब्रह्म का समुद्र बन जाती हैं । उस श्रेष्ठ सौंदर्य की प्राप्ति के लिए जहाँ कहीं भी जाने की वे आज्ञा देते हैं, वहाँ नहीं जाओगे क्या ? यदि वे ऐसा चाहते हैं तो तुम्हें प्रसन्नतापूर्वक सहस्रों जन्म-मृत्यु में जाना होगा। तुम उनके प्रिय सेवक जो हो ! उनकी इच्छा तुम्हारा धर्म है, तुम्हारी इच्छा उनकी इच्छा की यंत्र बन गयी है । उनका अनुसरण करना ही तुम्हारा धर्म है । शास्त्र कहते हैं कि गुरु ही ईश्वर हैं । गुरु ब्रह्मा, विष्णु और महादेव हैं । वे वास्तव में परब्रह्म हैं । गुरु से ब ढ़कर कोई नहीं है ।

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो...
गुरु गोविन्द दोऊ खड़े किसको लागूँ पाँय...

- श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ ब्रह्मलीन
स्वामी अखण्डानन्द सरस्वती

*

पुनर्नवा-साटी-श्वेता-विषखपरा

पुनर्नवा, साटी या विषखपरा के नाम से विख्यात यह वनस्पति वर्षा ऋतु में बहुतायत से पायी जाती है। शरीर की आंतरिक एवं बाह्य सूजन को दूर करने के लिये यह अत्यंत उपयोगी है ।

यह तीन प्रकार की होती है : सफेद, लाल एवं काली । काली पुनर्नवा प्रायः देखने में भी नहीं आती । जो देखने में आती है वह प्रायः सफेद ही होती है । काली प्रजाति बहुत कम स्थलों पर पायी जाती है । पुनर्नवा की सब्जी बनाकर खायी जाती है। जैसे तांदूल तथा पालक की भाजी बनाते हैं, वैसे ही इसे बनायें । इसकी सब्जी शोथ (सूजन) की नाशक, मूत्रल तथा स्वास्थ्यवर्धक है ।

पुनर्नवा कड़वी, उष्ण, तीखी, कसैली, रुच्य, अग्निदीपक, रुक्ष, मधुर, खारी, सारक, मूत्रल एवं हृदय के लिए लाभदायक है । यह वायु, कफ, सूजन, खांसी, बवासीर, व्रण, पांडुरोग, विषदोष एवं शूल का नाश करती है ।

पुनर्नवा में से पुनर्नवादि क्वाथ, पुनर्नवा मंडूर, पुनर्नवामूल घनवटी, पुनर्नवाचूर्ण आदि औषधियाँ बनती हैं । बड़ी पुनर्नवा को साटोडो (वर्षाभू) कहा जाता है । उसके गुण भी पुनर्नवा के जैसे ही हैं । पुनर्नवा का संस्कृत पर्याय 'शोथघ्नी' (सूजन को हरनेवाली) है ।

पुनर्नवा-साटी के औषधि-प्रयोग

१. नेत्रों की फूली : पुनर्नवा की जड़ को घी में घिसकर आँजें।

२. नेत्रों की खुजली (अक्षीकंडू) : पुनर्नवा की जड़ को शहद अथवा दूध में घिसकर आँजने से लाभ होता है।

३. नेत्रों से पानी गिरना (अक्षीस्राव) : पुनर्नवा की जड़ को शहद में घिसकर आँखों में आँजने से लाभ होता है।

४. रतौंधी : पुनर्नवा की जड़ को कांजी में घिसकर आँखों में आँजें।

५. खूनी बवासीर : पुनर्नवा की जड़ को हल्दी के काढ़े में देने से लाभ होता है।

६. पीलिया (Jaundice) : पुनर्नवा के पंचांग को शहद एवं मिश्री के साथ दें अथवा उसका रस या काढ़ा पियें।

७. मस्तक रोग एवं ज्वर रोग : पुनर्नवा के पंचांग का २ ग्राम चूर्ण १० ग्राम घी एवं २० ग्राम शहद में सुबह-शाम देने से लाभ होता है।

८. जलोदर : पुनर्नवा की जड़ के चूर्ण को शहद के साथ खायें।

९. सूजन : पुनर्नवा की जड़ का काढ़ा पिलाने एवं सूजन पर लेप करने से लाभ होता है।

१०. पथरी : पुनर्नवामूल को दूध में उबालकर सुबह-शाम पियें।

११. विष :

(क) चूहे का विष : सफेद पुनर्नवामूल का २-२ ग्राम चूर्ण १० ग्राम शहद के साथ दिन में दो बार दें।

(ख) पागल कुत्ते का विष : सफेद पुनर्नवा के मूल का रस २५ से ५० ग्राम, २० ग्राम घी में मिलाकर रोज पियें।

१२. विद्रधी (फोड़ा) : पुनर्नवा के मूल का काढ़ा पीने से कच्चा फोड़ा - मूढ (दुष्ट) फोड़ा भी मिट जाता है।

१३. अनिद्रा : पुनर्नवामूल का क्वाथ १००-१०० मि. ली. दिन में दो बार पीने से निद्रा अच्छी आती है।

१४. संधिवात : पुनर्नवा के पत्तों की भाजी सोंठ डालकर खायें।

१५. वातकंटक : वायु-प्रकोप से पैर की एड़ी में वेदना होती हो तो पुनर्नवा में सिद्ध किया हुआ तेल पैर की एड़ी पर घिसें एवं सेंक करें।

१६. योनिशूल : पुनर्नवा के हरे पत्तों को पीसकर बनाई गई उँगली जैसे आकार की सोगठी को योनि में धारण करने से भयंकर योनिशूल भी मिटता है।

१७. विलंबित प्रसव-मूढ़गर्भ : थोड़ा तिल का तेल मिलाकर पुनर्नवा के मूल का रस योनि में लगायें। इससे रुका हुआ बच्चा तुरंत बाहर आ जाता है।

१८. गैस : पुनर्नवा के मूल का चूर्ण २ ग्राम, हींग आधा ग्राम तथा काला नमक एक ग्राम गर्म पानी से लें।

१९. स्थूलता (Obesity) **मेदवृद्धि** : पुनर्नवा के ५ ग्राम चूर्ण में १० ग्राम शहद मिलाकर सुबह-शाम लें। पुनर्नवा की सब्जी बनाकर खायें।

२०. मूत्रावरोध : पुनर्नवा का ४० मि. ली. रस अथवा उतना ही काढ़ा पियें। पेढू पर पुनर्नवा के पान बाफकर बाँधें। १ ग्राम पुनर्नवाक्षार (आयुर्वैदिक स्टोर से मिलेगा) गरम पानी से पीने से तुरंत फायदा होता है।

२१. खूनी बवासीर : पुनर्नवा के मूल को पीसकर फीकी छाछ (२०० मि. ली.) या बकरी के दूध (२०० मि. ली.) के साथ पियें।

२२. उदर (पेट के) रोग : गौमूत्र एवं पुनर्नवा का रस समान मात्रा में मिलाकर पियें।

२३. श्लीपद (हाथीरोग) : पुनर्नवा का रस

५० मि. ली. और उतना ही गौमूत्र मिलाकर सुबह-शाम पियें।

२४. वृषण शोथ : पुनर्नवा का मूल दूध में घिसकर लेप करने से वृषण की सूजन मिटती है। हाइड्रोसील (Hydrocele) में भी फायदेमंद है।

२५. हृदयरोग : हृदयरोग के कारण सर्वांग सूजन हो गई हो तो पुनर्नवा के मूल का १० ग्राम चूर्ण और अर्जुन के छाल का १० ग्राम चूर्ण २०० मि.ली. पानी में काढ़ा बनाकर सुबह-शाम पियें।

२६. श्वास (दमा) : भारंगमूल चूर्ण १० ग्राम और पुनर्नवा चूर्ण १० ग्राम को २०० मि.ली. पानी में उबालकर काढ़ा बनाएँ। जब ५० मि.ली. बचे तब उसमें आधा ग्राम शृंगभस्म डालकर सुबह-शाम पीयें।

२७. गर्भाशय के रोग : आर्तवदुष्टि या गर्भाशय दुष्टि में पुनर्नवा क्वाथ की बस्ति या उत्तर बस्ति दें।

२८. रसायन प्रयोग : हमेशा स्वास्थ्य बनाये रखने के लिये रोज सुबह पुनर्नवा के मूल का या पत्ते का दो चम्मच (१० मि.ली.) रस पियें अथवा पुनर्नवा के मूल का चूर्ण २ से ४ ग्राम की मात्रा में दूध या पानी से लें या सप्ताह में २ दिन पुनर्नवा की सब्जी बनाकर खायें।

मूँग व चने की छिलकेवाली दाल मिलाकर इसकी बढ़िया सब्जी बनती है। ऊपर वर्णित तमाम प्रकार के रोग होवें ही नहीं, स्वास्थ्य बना रहे इसलिए इसकी सब्जी या ताजा पत्तों का रस कालीमिर्च व शहद मिलाकर पीना हितावह है। बीमार तो क्या, स्वस्थ व्यक्ति भी अपना स्वास्थ्य मजबूत रखने के लिए इसकी सब्जी खा सकते हैं। संत श्री आसारामजी आश्रम (दिल्ली, अमदावाद, सूरत आदि) में इसका नमूना देखा जा सकता है। आपके इलाकों में यह पर्याप्त मात्रा में होती होगी। भारत में यह सर्वत्र पाई जाती है।

❊

❀❀❀ कुछ उपयोगी बातें ❀❀❀

❊ घी, दूध, मूँग, गेहूँ, लाल साठी चावल, आँवले, हरड़े, अनार, अँगूर, परवल- ये सभी के लिए हितकर हैं।

❊ अजीर्ण एवं बुखार में उपवास या लंघन हितकर है।

❊ दही, पनीर, खटाई, अचार, कटहल, कुन्दरु, मावे की मिठाई- ये सभी के लिए हानिकारक हैं।

❊ अजीर्ण में भोजन एवं बुखार में दूध विष तुल्य है।

❊ उत्तर भारत में अदरक के साथ गुड़ खाना अच्छा है।

❊ मालवा प्रदेश में सूरन यानी जिमिकंद को उबालकर कालीमिर्च के साथ खाना लाभदायक है।

❊ अत्यंत सूखे प्रदेश जैसे कि कच्छ, सौराष्ट्र आदि में भोजन के बाद पतली छाछ पीना अच्छा है।

❊ बंबई, गुजरात में अदरक, नींबू एवं सैंधव नमक का सेवन अच्छा है।

❊ दही की लस्सी बिल्कुल हानिकारक है।

❊ दक्षिण गुजरातवाले पुनर्नवा (विषखपरा) की सब्जी का सेवन करें अथवा उसका रस पियें तो अच्छा है।

❊ दही एवं मावे की मिठाई खाने की आदतवाले पुनर्नवा का सेवन करें एवं नमक की जगह सैंधव नमक का उपयोग करें तो अच्छा है।

❊ शराब पीने की आदतवाले अँगूर एवं अनार खायें तो अच्छा है।

❊ आँव होने पर सोंठ का सेवन, लंघन अथवा पतली खिचड़ी और पतली छाछ का सेवन लाभप्रद है।

❊ अत्यंत पतले दस्त में सोंठ एवं अनार का

रस लाभदायक है।

❊ आँख के रोगी के लिए घी, दूध, मूँग एवं अँगूर का आहार अच्छा है।

❊ व्यायाम तथा अति परिश्रम करनेवाले के लिए केले, इलायची के साथ घी खाना अच्छा है।

❊ सूजन के रोगी के लिए नमक, खटाई, दही, फल, गरिष्ठ आहार, मिठाई अहितकर है।

❊ यकृत (लीवर) के रोगी के लिए दूध अमृत के समान है एवं नमक, खटाई, दही एवं गरिष्ठ आहार विष के समान है।

❊ वात रोगी के लिए अदरक के रस में घी लेना अच्छा है लेकिन आलू, मूँग के सिवाय के दलहन एवं गरिष्ठ आहार विषवत् है।

❊ कफ के रोगी के लिए सोंठ एवं गुड़ हितकर हैं परंतु दही, फल, मिठाई विषवत् है।

-वैद्यराज अमृतभाई
साँई श्री लीलाशाहजी उपचार केन्द्र
वरियाव रोड, जहाँगीरपुरा, सूरत (गुज.).

❊

सर्पदंश-उपचार

सर्पविष उतारने के लिए यहाँ एक मंत्र एवं प्रयोगसिद्ध उपाय दिया जा रहा है। सर्प काटे हुए मरीज को निम्न मंत्र पढ़कर गरुड़ के पंख (गरुड़ का पंख न मिले तो मोरपंख) से ७ बार झाड़ें।

सुपर्णा पक्षपातेन भूमिम् गच्छ महाविष।

साथ ही यह प्रयोग करें :

पीपल के ताजे पत्तों की टहनी तोड़ लें। उसमें से डंठल सहित दो पत्तों को डंठल की ओर से ही दोनों कानों में करीब एक-डेढ़ से. मी. अंदर डालें। सर्प का विष बलात् उसे अंदर खींचेगा किन्तु वह और अंदर न जाये अतः उसे पकड़ रखें। असावधानी से कान के पर्दे को नुकसान पहुँच सकता है।

पीपल के पत्तों की नई-नई डंठलें दो-पाँच-दस बार तक बदलते रहें जब तक सारा विष खिंच न जाए। पूरा जहर उतर जाने पर फिर डंठल अंदर नहीं खिंचेगा, यह उसकी पहचान है।

बाद में उन पत्तों को जमीन के अंदर गाड़ दें अन्यथा पशुओं द्वारा खाये जाने पर उन्हें भी जहर चढ़ने लगता है।

कहते हैं : सर्प काटा हो, तीन दिन हो गये हों, स्मशान में ले जाया गया हो ऐसे व्यक्ति को भी इस प्रयोग से जिंदा लौटाया जा सकता है।

आश्रम के साधक भाई दीपक को भयंकर सर्प ने काटा। वी. एस. अस्पताल, अमदावाद में भर्ती कराया गया। पहले तो डाक्टरों ने कहा कि ४ घंटे का मेहमान है। (सर्पदंश का दूसरा मरीज भी पिछले १० दिन से पड़ा था।) ४ घंटे के बाद डाक्टरों ने बताया कि १०-१५ दिनों के बाद दीपक होश में आयेगा। २४ जुलाई को यह घटना घटी। फोन पर पूज्य बापू से प्रार्थना की गई तो यह उपाय मिला। प्रयोग करने से दीपक भाई को जादुई फायदा हुआ। २४ जुलाई की रात और २५ की प्रभात प्रयोग किया गया। उसके दो दिन बाद वे आश्रम में सेवा करने लगे।

डॉक्टर चकित रह गये! प्राचीन दैवी उपायों की यह बलिहारी है! ऋषि-मुनियों के आविष्कारों को धन्यवाद है। इस निर्दोष उपाय से यह प्रत्यक्ष प्रमाण मिला।

'ऐन्टीबायोटिक' (प्रतिजैविक) अंग्रेजी दवाइयाँ 'साइड इफेक्ट' पैदा करती हैं। किडनी, फेफड़ा, लीवर खराब करके 'साइड इफेक्ट' की मुसीबत जीवन भर के लिए देती हैं। हिन्दू धर्म और भारतीय संस्कृति की खिल्ली उड़ानेवाले अभागे अंग्रेजों ने हमें ऋषि-मुनियों के अथाह निर्दोष ज्ञान से वंचित कर दिया।

विदेशी लोग आयुर्वेद की, आयुर्वैदिक औषधियों की प्रशंसा कर रहे हैं तो भारतीय

थोड़ा-बहुत अब जाग रहे हैं।

अंग्रेजी दवाइयाँ रोग को दबाकर जल्दी आराम दिखाती हैं जबकि आयुर्वैदिक दवाइयाँ रोग को जड़ से निकालती हैं। इसमें समय लगता है, पर ये निर्दोष हैं। इनका कोई 'साइड इफेक्ट' नहीं होता है।

हमारे एक मित्र के पैर की एड़ी किसी दुर्घटना में कट गयी थी। उन्हें नरेन्द्रनगर के सरकारी अस्पताल में दाखिल किया गया। 'गेटोल' और 'सोफ्रामाइसिन' की कई ट्यूब्स (नलियाँ) खाली हो गईं। घाव ठीक नहीं हुआ। 'ऐन्टीबायोटिक' गोलियों और इंजेक्शनों में खूब पैसा लुटाया, पर ठीक न हुआ। आखिर **'सर्वगुण तेल'** दिन में दो बार गुनगुना कर लगाया गया। इससे जादुई फायदा देखा गया।

इस सर्वगुण तेल का उपयोग परम पूज्य संत श्री आसारामजी बापू ने भी स्वयं पर किया। फोड़ा हो रहा था तब दो दिन उस पर सर्वगुण तेल लगाया जिससे फोड़ा गायब हो गया। कहीं थोड़ी चोट लगी, खून निकला और एक दो बार सर्वगुण तेल लगाया तो वह जगह ठीक हो गई। आप भी प्राकृतिक पद्धति से बनाये गये इस सर्वगुण तेल का लाभ लें।

बहुत फायदा करनेवाला, बहुत सस्ता **'सर्वगुण तेल'** सेवाभावी **श्री योग वेदान्त सेवा समिति** से मिलेगा।

पीपल के पत्ते तथा मंत्र का प्रयोग करके सर्पदंश से मरते हुए को जीवन दान दे सकते हैं।

बिजली का तेज झटका (करेंट) लगा हो या सर्पदंश हो तो १० ग्राम तुलसी का रस पिलाने से भी बहुत लाभ होता है। *- संपादक*

महत्त्वपूर्ण निवेदन : सदस्यों के डाक पते में परिवर्तन अगले अंक के बाद के अंक से कार्यान्वित होगा। जो सदस्य ८३ वें अंक से अपना पता बदलवाना चाहते हैं, वे कृपया सितम्बर के अंत तक अपना नया पता भिजवा दें।

गुरुप्रसादरूपी फल फला...

शादी के बाद दो वर्ष ब्रह्मचर्य-व्रत पालन कर श्री गुरुदेव को समर्पित कर सकूँ- ऐसी संतान की इच्छा से मैंने पूज्य बापू को मन-ही-मन प्रार्थना की। प्रत्युत्तर में गुरुदेव ने उत्तम संतान की प्राप्ति के लिए मेरी पत्नी को सेवफल का प्रसाद दिया जिसके फलस्वरूप एक सुंदर बालक का जन्म हुआ।

वह बालक आते ही मानों अधूरी साधना पूरी करने में लग गया। पहले दिन से ही नींद नहीं करता था। जब उसे **'श्रीआसारामायण'** का पाठ सुनाया जाता तब सोता था। गहरी नींद में भी हमेशा अपनी आँखों की पुतलियों को आज्ञाचक्र में, जीभ को तालु में लगाकर ध्यान करता रहता था। ध्यान में ऐसे हँसता और रोता था जैसे पूज्य बापू का विरह उससे सहन ही नहीं हो रहा हो। एक-डेढ़ माह की अल्पायु से ही पूज्य बापू व बालयोगी नारायण साँईं को वह पहचानता है। दूसरे खिलौनों की तरह उनकी तस्वीरों से ही खेलना उसको अच्छा लगता है। उनको देखते ही खुश हो जाता है। सोने से पहले या उठने के बाद पूज्य बापू की फोटो के दर्शन करने का जैसे नित्यक्रम हो, ऐसे देखता रहता है। पहली बार पूज्य बापू के दर्शन करवाने ले गये और नामकरण के लिये पूछा तो पूज्य बापू ने कहा :

''यह सफरजन* से आया है तो इसका

नाम भी सफरचंद (सेवफल) ही रख दो।''

अपना यह नाम सुनकर वह बहुत खुश होता है। उसके लक्षण देखने से ऐसा लगता है जैसे पूज्य बापू ने किसी योगी को अपना लक्ष्य पूरा करने के लिये भेजा हो। पूज्य बापू की इतनी करुणा-कृपा देखकर हृदय भर जाता है। पूज्य बापू से यह प्रार्थना करता हूँ कि यह बालक उनको समर्पित कर सकूँ और वह उनके योग्य बन सके ऐसी हमें सद्बुद्धि दें।

-चन्देश भानुशाली (कच्छी)

इन्दौर (म. प्र.).

[★ सेवफल को गुजराती में 'सफरजन' कहते हैं।]

पूज्यश्री की अमृतवाणी पर आधारित ऑडियो-विडियो कैसेट, कॉम्पेक्ट डिस्क व सत्साहित्य रजिस्टर्ड पोस्ट पार्सल से मँगवाने हेतु

(१) ये वस्तुएँ रजिस्टर्ड पार्सल द्वारा भेजी जाती हैं।

(२) इनका पूरा मूल्य अग्रिम डी. डी. अथवा मनीऑर्डर से भेजना आवश्यक है।

(A) कैसेट व कॉम्पेक्ट डिस्क का मूल्य इस प्रकार है :

10 ऑडियो कैसेट	: मात्र	Rs. 241/-
3 विडियो कैसेट	: मात्र	Rs. 435/-
4 कॉम्पेक्ट डिस्क (C. D.)- भजन	: मात्र	Rs. 441/-
4 कॉम्पेक्ट डिस्क (C. D.)- सत्संग	: मात्र	Rs. 541/-

इसके साथ सत्संग की दो अनमोल पुस्तकें भेंट

★ डी. डी. या मनीऑर्डर भेजने का पता ★

कैसेट विभाग, संत श्री आसारामजी महिला उत्थान आश्रम, साबरमती, अमदावाद-380005.

(B) सत्साहित्य का मूल्य इस प्रकार है :

हिन्दी किताबों का सेट	: मात्र	Rs. 431/-
गुजराती ''	: मात्र	Rs. 380/-
अंग्रेजी ''	: मात्र	Rs. 100/-
मराठी ''	: मात्र	Rs. 118/-

★ डी. डी. या मनीऑर्डर भेजने का पता ★

श्री योग वेदान्त सेवा समिति, सत्साहित्य विभाग, संत श्री आसारामजी आश्रम, साबरमती, अमदावाद-380005.

नोट : अपना फोन हो तो फोन नंबर एवं पिन कोड अपने पते में अवश्य लिखें।

अमदावाद : १५ अगस्त को पूज्यश्री के पावन सान्निध्य में रविवारीय सत्संग व स्वतंत्रता दिवस पर प्रवचन अमदावाद आश्रम में संपन्न हुआ। १५ अगस्त, १९४७ की याद ताजा करते हुए वीर शहीदों के वीरतापूर्ण प्रेरणादायी प्रसंगों की चर्चा की गई। पूज्यश्री ने इस लौकिक आजादी की रक्षा के साथ-साथ अलौकिक आजादी, जन्म-मरण के चक्रव्यूह से भी आजादी प्राप्त करने का आह्वान किया।

ब्रह्मनिष्ठ पूज्य बापू ने **स्वतंत्रता दिवस का संदेश** देते हुए कहा कि :

''इस आजादी के पीछे हमने कितनी कुर्बानियाँ दी हैं! हम भगवान को प्रार्थना करें कि हम कदम-से-कदम मिलाकर चलें, विचार-से-विचार मिलाकर रहें और अपनी आत्मशक्ति को, श्रद्धाशक्ति को, कर्मशक्ति को विकसित करें तभी तो यह आजादी बरकरार रहेगी। बाकी, आजादी के उत्सव मना लेना ही पर्याप्त नहीं है। आपसी फूट डालनेवाले फिर से हमें आपसी फूट का शिकार बनाकर हमारी आजादी न छीन लें, उसकी सावधानी भी होनी चाहिए।

आज का दिन प्रार्थना का दिन है, सावधानी का दिन है, संयम व सदाचार, साहस और सद्विचार बढ़ाने का दिन है, सामर्थ्य बढ़ाने के संकल्प करने का दिन है।

लगभग २०० वर्ष तक ब्रिटिश शासन ने 'फूट डालो और शासन करो' की नीति के तहत ही हमारे भारतवर्ष का शोषण किया। देश की एकता व अखंडता को खण्डित करने का दुष्ट इरादा रखनेवाले तत्त्वों से हमें सावधान रहना चाहिए।''

चातुर्मास में अनुष्ठान, जप, ध्यान-भजन को अधिक फलदायी बताते हुए ज्ञान-भक्ति-योग के अनुभवनिष्ठ पूज्य बापू ने बताया कि : **''चातुर्मास भगवान नारायण की समाधि अवस्था का दिन है। देवशयनी एकादशी से**

प्रबोधिनी एकादशी तक के ४ माह वे योगनिद्रा में शयन करते हैं, आत्मसमाधि में समाधिस्थ रहते हैं। जैसे हिमालय में बर्फ पड़ता है तो उसकी शीतलता यहाँ के वातावरण तक खबर देती है वैसे ही भगवान नारायण की ४ महीने की ध्यानमग्न अवस्था के प्रभाव से हम लोगों को भी ध्यान-भजन, मौन-साधना और शांत होने में मदद मिलती है।

एक जगह बर्फ पड़ता है तो आसपास के वातावरण में भी ठंडक फैल जाती है। वह तो जड़ है, चेतन का इससे भी ज्यादा प्रभाव होता है। इसी कारण चातुर्मास में ध्यान-भजन, व्रत-उपवास अधिक फलदायी माना जाता है।''

अन्य सत्संग-कार्यक्रम

दिनांक	शहर	कार्यक्रम	समय	स्थान	संपर्क फोन
२९ से ३१ अगस्त '९९	बारडोली (गुज.)	सत्संग समारोह प्रथम सत्र श्री सुरेशानंदजी द्वारा	सुबह ९ से ११ शाम ३ से ५	सरदार पोलीटेकनिक कॉलेज, ताजपोर, बारडोली (गुज.).	(०२६२२) २२४२८.
२ से ५ सितम्बर '९९	सूरत आश्रम	जन्माष्टमी महोत्सव		संत श्री आसारामजी आश्रम, वरियाव रोड, जहाँगीरपुरा, सूरत।	(०२६१) ६८५३४१, ६८७९३६.
७ और ८ सितम्बर '९९	मालपुर (गुज.)	सत्संग समारोह	सुबह ९-३० से १२ शाम ३-३० से ६	श्री पी. जी. मेहता हाईस्कूल, बस स्टेण्ड के पीछे, मालपुर, जि. साबरकांठा (गुज.).	(०२७७३) २३२२८, २३५६३.
१२ से १५ सितम्बर '९९	उदयपुर	सत्संग समारोह	सुबह १० से १२ शाम ४ से ६	बी. एन. कॉलेज ग्राउण्ड, उदयपुर (राज.).	(०२९४) ५६०६१६, ६५५६१२, ४१३६८८.
१६ से १९ सितम्बर '९९	जयपुर	सत्संग समारोह			(०१४१) ३६१६६९, ३७०४९३, ६३०५०२.
२३ से २६ सितम्बर '९९	चण्डीगढ़	सत्संग समारोह		सेक्टर २० का मैदान, लक्ष्मी नारायण मंदिर के सामने, चण्डीगढ़।	(०१७२) ७१६६६७, ६००३०८, ६६०४०१, ६६१७४०.
२७ शाम से २९ सितम्बर '९९	केथल (हरियाणा)	सत्संग समारोह		आर. के. एस. डी. कालेज ग्राउण्ड, अम्बाला रोड, केथल।	(०१७४६) २८८४८, २८७५४, २२४८१, २३६५७.
३० सितम्बर से ३ अक्तूबर '९९	कुरुक्षेत्र (हरियाणा)	सत्संग समारोह			(०१७४४) २९४२६, २१३१४, २१६४६.
८ से ११ अक्तूबर '९९	कानपुर	सत्संग समारोह		ब्रिजेन्द्र स्वरूप पार्क, कानपुर।	(०५१२) २८०४२६, २८०४३०, मोबाईल : ०९८३९०३४६२०
१५ से १७ अक्तूबर '९९	दिल्ली	विद्यार्थी शिविर आम सत्संग दि.१८		पप्पनकलां, दिल्ली।	(०११) ५७२९३३८, ५७६४१६१.
१८ से २० अक्तूबर '९९	दिल्ली	ध्यानयोग शिविर		पप्पनकलां, दिल्ली।	(०११) ५७२९३३८, ५७६४१६१.
१९ से २१ अक्तूबर '९९	आगरा	सत्संग समारोह प्रथम दो दिन श्री सुरेशानंदजी का		बलकेश्वर कॉलोनी ग्राउण्ड, आगरा।	(०५६२) ३७१७७०, ३७२०१६, २१३३५५.
२२ से २४ अक्तूबर '९९	आगरा आश्रम	शरदपूर्णिमा शिविर		संत श्री आसारामजी आश्रम, आगरा मथुरा रोड़, आगरा।	(०५६२) ३७१७७०, ३७२०१६, २१३३५५.

पूर्णिमा दर्शन : (१) २४ सितम्बर '९९. चण्डीगढ़ में। (२) २४ अक्तूबर '९९. आगरा आश्रम में।